(देश देशान्तरों में प्रचारित, सबसे सस्ता, उच्च कोटि का आध्यात्मिक-पत्र)

सन्देश नहीं मैं स्वर्ग लोक का लाई।
इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आई॥

मूल्य २) सम्पादक-श्रीराम शर्मा आचार्य। एक अंक ≈)

प्राप्त ह
हैं। त्रि

मथुरा, १ जनवरी सन् १९४५ ई० [illegible] शान्ति कुञ्ज [illegible] हरिद्वार.

सिद्धि रूपी संपदा-साधकों को ही मिलती है!

संसार में अनेक प्रकार के सुख हैं पर सफलता का विजय का सुख सब से बड़ा है इससे बढ़कर और कोई सुख नहीं। एक मनुष्य जब अपनी चिर सञ्चित इच्छा और आकांक्षाओं को पूरा हुआ देखता है तो उसे एक आन्तरिक सन्तोष मिलता है। यह सन्तोष एक प्रकार की आध्यात्मिक खुराक है जिसके मिलने से आत्मबल में असाधारण वृद्धि होती है।

विजय अकेली नहीं आती वह अपने साथ अनेक सम्पत्तियाँ लाती है, जिनके वैभव से मनुष्य का मन शरीर और घर जगमगाने लगता है। जिसने सफलता प्राप्त की, उसके गले में लक्ष्मी की वर माला रहती है, संसार उसके आगे मस्तक झुका देता है। उसके दोष भी गुण बन जाते हैं। यह दुनियाँ सदा से विजयी वीरों की पूजा करती आरही है। जिसने अपना पराक्रम प्रकट किया है उसी की महानता स्वीकार की गई है। जिसने चमत्कार कर दिखाया उसे नमस्कार किया गयाहै।

[illegible] लिये मनुष्य जीवन में प्राप्त हो सकने वाली सम्पदाओं में सफलता को, सिद्धि को, सर्वोपरि [illegible] गया है। इस महान सम्पदा को हर कोई चाहता है, प्रत्येक व्यक्ति इच्छा करता है कि अमुक [illegible] सफलता प्राप्त करूँ परन्तु इन चाहने वालों में से बहुत कम लोग सफल मनोरथ हो पाते हैं। कारण [illegible] कि जो वस्तु जितनी ही उत्तम है वह उतने ही कठिन [illegible] से मिलती है। जिनमें दृढ़ता, साहस, [illegible] लगन और परिश्रम शीलता है [illegible] इस [illegible] के [illegible] जरूरी होते हैं। साधना से [illegible] जो लोग [illegible] कामना पूर्वक अपने लक्ष [illegible] विजयश्री को प्राप्त

मनुष्य को देवता बनाने वाली पुस्तकें

जो ज्ञान युगों के प्रयत्न से मिलता है उसे हम अनायास ही आपके सामने उपस्थित क

(१) मैं क्या हूं मूल्य ।=)
(२) सूर्य चिकित्सा विज्ञान ।=)
(३) प्राण चिकित्सा विज्ञान ।=)
(४) पर काया प्रवेश ।=)
(५) स्वस्थ और सुन्दर बननेकी अद्भुत विद्या ।=)
(६) मानवीय विद्युत के चमत्कार ।=)
(७) स्वर योग से दिव्य ज्ञान ।=)
(८) भोग में योग ।=)
(९) बुद्धि बढ़ाने के उपाय ।=)
(१०) धनवान बनने के गुप्त रहस्य ।=)
(११) पुत्र या पुत्री उत्पन्न करने की विधि ।=)
(१२) वशीकरण की सच्ची सिद्धि ।=)
(१३) मरने के बाद हमारा क्या होता है ।=)
(१४) जीव जन्तुओं की बोली समझना ।=)
(१५) ईश्वर कौन है ? कहां है ? कैसा है ? ।=)
(१६) क्या धर्म ? क्या अधर्म ? ।=)
(१७) गहना कर्मणो गतिः ।=)
(१८) जीवन की गूढ़ गुत्थियों पर प्रकाश ।=)
(१९) शक्ति संचय के पथ पर ।=)
(२०) पंचाध्यायी
(२१) आत्म गौरव की साधना
(२२) प्रतिष्ठा का उच्च सोपान
(२३) मित्र भाव बढ़ाने की कला
(२४) आन्तरिक उल्लास का विकाश
(२५) आगे बढ़ाने की तैयारी
(२६) अध्यात्म धर्म का अवलम्बन
(२७) ब्रह्म विद्या का रहस्योद्घाटन
(२८) ज्ञान योग, कर्मयोग, भक्तियोग
(२९) यम-नियम
(३०) आसन और प्राणायाम
(३१) प्रत्याहार धारणा, ध्यान और समाधि
(३२) तुलसी के अमृतोपम गुण
(३३) आकृति देखकर मनुष्य की पहच
(३४) मैस्मरेजम की अनुभव पूर्ण शिक्षा
(३५) ईश्वर और स्वर्ग प्राप्ति का सच्चा
(३६) हस्त रेखा विज्ञान
(३७) विवेक सतसई
(३८) संजीवन विद्या

अन्य प्रकाशकों की कुछ उत्तमोत्तम पुस्तकें ।

(१) सर्प विष चिकित्सा ॥)
(२) जल चिकित्सा ॥)
(३) गर्भ निरोध (संतान होना रोकना) ।–)
(४) नेत्र रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा ॥–)
(५) दूध से सब रोगों का शर्तिया इलाज ॥)
(६) संक्षिप्त दुग्ध चिकित्सा ।=)
(७) प्राकृतिक चिकित्सा प्रश्नोत्तरी ।)
(८) प्राकृतिक चिकित्सा का सूर्योदय (दोनों भाग) ।॥)
(९) बुढ़ापा और बीमारी से बचने के सरल उपाय ॥)
(१०) उपवास और फलाहार चिकित्सा ॥)
(११) मिट्टी सभी रोगों की रामबाण औषधि
(१२) पृथ्वी की रोगनाशक शक्ति
(१३) नवीन चिकित्सा पद्धति
(१४) हमें क्या खाना चाहिये
(१५) तम्बाकू प्राण घातक विष है
(१६) धूप हवा और सरदी से आरोग्य
(१७) ज्वर चिकित्सा
(१८) वस्त्रों का स्वास्थ्य पर
(१९) धातु दुर्बलता की चिकित्सा
(२०) भोजन से आरोग्य रक्षा और

नोट—कमीशन देना कतई बन्द है । आठ या रुपये से अधिक पुस्तकें लेने पर डाक खर्च हम अपन

अखण्ड-ज्योति

धा बीज बोने से पहिले, काल कूट पीना होगा।
हिन मौत का मुकुट विश्व-हित, मानव को जीना होगा॥

मथुरा १ जनवरी सन् १९४५ ई०

सिद्धि के सिद्धान्त।

आध्यात्म विद्या में जिन्होंने थोड़ा बहुत भी प्रवश किया है वे जानते हैं कि साधना से सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। अष्ट सिद्धि और नव निधि प्रसिद्धि हैं। विभिन्न योगों द्वारा विभिन्न शक्तियों का मिलना प्रकट ही है। इन्द्रियों के आकर्षक भोगों को सुख सुविधा को, ऐश, आराम को छोड़कर कोई व्यक्ति कष्ट दायक. कठोर, नीरस, श्रम साध्य साधना में प्रवृत्त होता है तो वह ऐसा करने के लिए योंही उद्यत नहीं होजाता। ज्यादा कीमती चीज के लिए कम कीमती चीज का त्याग किया जाता है। साधना का कष्ट इसलिए सहन करते हैं कि जिन सुखों का त्याग किया गया है उससे अधिक मूल्यवान सुख प्राप्त हो। यदि ऐसा न होता तो कोई भी व्यक्ति साधना का कष्ट सहने को तैयार न होता।

अनेक अवसरों पर अनेक व्यक्तियों द्वारा ऐसे कार्य करते हुए किन्हीं व्यक्तियों को देखा जाता है जैसे कि कार्य साधारण आदमी आम तौर पर नहीं कर सकता। आम जनता के साधारण दायरे से बाहर की जो चीज होती है वह सिद्धि कहलाती है। जैसे हवा में उड़ने वाला मनुष्य सिद्ध कहा जायगा किन्तु पक्षी को कोई सिद्ध न कहेंगे। पक्षी आमतौर से उड़ते हैं इसलिए उनके उड़ने में कुछ अचंभा नहं है। मनुष्य के उड़ने में इसलिए अचंभा है क्यों वि आमतौर से मनुष्य प्राणी उड़ा नहीं करता। पानं में रहना हमारे लिए सिद्धि है मछली के लिए नहीं. एक घंटे में बीस मील की चाल से दौड़ना हमार लिए सिद्धि है पर घोड़े के लिए नहीं। हाथी को कोई मनुष्य पछाड़दे तो उसे सिद्ध कहा जायगा किन्तु सिंह जो अक्सर हाथियों को पछाड़ता रहता है सिद्धि नहीं कहलाता। कहने का तात्पर्य यह है कि इस समय जो बातें सब किसी में दिखाई नहीं पड़ती वह बातें किसी विशेष व्यक्ति में हों तो उसे आध्यात्मिक भाषा में 'सिद्ध' शब्द से पुकारा जायगा। आश्चर्य जनक और असाधारण कार्यों का ही दूसरा नाम 'सिद्ध' है।

एक समय में जो बात साधारण होती है वही बात समय और परिस्थिति के प्रभाव से असाधारण हो जाती है। सतयुग त्रेता आदि प्राचीन युगों में अब की अपेक्षा मनुष्य अधिक ऊंचा-लम्बा चौड़ा, अधिक खाने वाला और अधिक काम करने वाला होता था, किन्तु इस समय में तब की अपेक्षा आदमी की काया. खुराक और मजबूती बहुत घट गई है। सतयुग के लम्ब तड़ंग आदमी को अब लाकर दिखाया जाय या अब के आदमियों को तब सतयुग वालों को दिखाया जाता तो निस्संदेह आश्चर्य की सीमा न रहती। तब का मनुष्य तब अचंभे की चीज न था, अब का अब भी अचंभे की चीज नहीं है. किन्तु समय और परिस्थिति के कारण जो परिवर्तन होगया है वह परिवर्तन ही अचंभे का कारण है। एक देश वाले दूसरे देश वालों के रीति रिवाज. खान पान, वेष भूषा, और भाषा को आश्चर्य जनक समझते हैं लेकिन अपने देश की प्रथा प्रणाली किसी को अचरज की मालूम नहीं देती। सिद्धियाँ हमें आश्चर्य में डालती हैं। क्यों ? — इसलिए कि वे आम लोगों में वर्तमान समय में नहीं देखी जाती। जो वस्तु सब किसी के

ास नहीं है वही आश्चर्य है, चमत्कार है, वैभव है। ीतल के वर्तन हर किसी के घर में होते हैं उन्हें खकर कुछ कौतूहल नहीं होता परन्तु सोने की ाली में किसी को भोजन करते हुए देखते हैं तो ार बार उसकी ओर ध्यान आकर्षण होता है। ादि सोना इतनी अधिक मात्रा में निकलने लगे कि र घर में सोने के वर्तन होजायें तो पीतल की भाँति ी वह सोना भी आकर्षण हीन हो जायगा। यदि भी धनी, बँगले वाले मोटर वाले, अमीर होजाँय तो फिर उनकी ऐसी पूछ न रहेगी जैसी कि अब है। सिद्धियों को देखकर आश्चर्य का होना ऐसा ही है। अधिक लोगों के पास जो योग्यताऐं नहीं हैं उन्हें किसी खास व्यक्तियों में देख कर विचित्रता प्रतीत होती है।

चमत्कारों को देखकर हम अचंभा करते हैं। तो भी वास्तव में स्वतः उनमें अचंभे की कोई बात नहीं है। हवा में ःना पानी पर चलना, अदृश्य रहना, द्रुत गति से चलना, आदि काम स्वत. ऐसे नहीं है जो हैरत में डालने वाले हो क्योंकि बहुत से प्राणी इस दुनियाँ में ऐसे हैं जो ऐसी प्रक्रयाऐं आमतौर से करते रहते हैं। इसलिए हमें यह समझने की आवश्यकता नहीं है कि अष्ट सिद्धि नव निद्धि स्वतः कोई हैरत अंगेज वस्तु हैं। वे हमें अचभे में डालती हैं. इससिए कि साधारणतः वे शक्तियों सब लोगों में देखी नहीं जातीं। इसका मतलव यह नहीं है कि वे सामर्थ्य मनुष्य में स्वभावतः नही हैं, या कहीं अन्यत्र से अनायास प्राप्त होजाती हैं।

मनुष्य अनन्त शक्तियों का महा भाण्डार है उसके अन्दर ऐसी महा सत्ताऐं सन्नहित हैं जिनके एक एक कण द्वारा एक एक जड़ जगत का निर्माण हो सकता है। जितना बल उसके अन्दर मौजूद है उसका लाखवां भाग भी वह अपने प्रयोग में प्रायः नहीं लापता है। इस छिपे हुए महा भण्डार में अगणित, अतुलित रत्न राशि छिपी पड़ी हैं, जो कोई जितना कुछ उसमें से निकाल लेता है वह उतना ही धनी बन जाता है। परमात्मा का अमर राज कुमार अपने में पिता की सम्पूर्ण शक्तियों का सच्चा उत्तराधिकारी है। इच्छा और प्रयत्न करते ही सव कुछ उसे मिल सकता है। कोई भी वस्तु ऐसी नहीं है जिसे वह अपने पिता के खजाने से पा न सके। जितनी सिद्धियाँ अब तक सुनी या देखी गई हैं वे सब बहुत थोड़ी हैं, अभी इनसे भी अनेक गुनी--अनन्त गुनी--तो वे छिपी ही पड़ी हैं। जब मनुष्य विकसित होते होते परमात्मा को ही प्राप्त कर सकता है--स्वयं पपमात्मा बन सकता है तो उन सब महानताओं और शक्तियों को भी पासकता है जो परमात्मा के हाथ में है। परमात्मा की इच्छा से हर एक असंवव बातसंभव होसकतीहै फिर परमात्माकी स्थितमें पहुंचा हुआ मनुष्य भी वैसा ही असंभव को संभव करके दिखा देने वाला होसकता है। सिद्धियां असंभव हैं ऐसा कहना भ्रम मूलक है। एक से एक आश्चर्य जनक चमत्कारी कार्य मनुष्यों द्वारा हुए हैं, हो रहे हैं, और आगे होंगे। हमारी क्षमताओं की संभावना इतनी ऊंची है कि साधारण बुद्धि से उसको कल्पना करना भी कठिन है। हर एक असंभव बात मानव प्रयत्न के द्वारा संभव हुई है और हो सकती है।

जलते हुए अंगार के ऊपर जब राख जमा हो जाती है तो वह राख से ढका हुआ अंगार बाहर से छूने पर गरम नहीं मालूम पड़ता। किन्तु जैसे जैसे उस राख को हटाया जाता है वैसे ही वैसे गर्मी बढ़ने लगती है जब वह पूर्ण रूप मे हट जाती है तो अंगार इतना गरम निकल आता है कि उसे छूना कठिन होता है। एक जलती हुई बिजली की बत्ती को कपड़े के अनेक पर्त्तों से ढक दिया जाय तो उसका प्रकाश कपड़ों से बाहर न आसकेगा। किन्तु जैसे जैसे उन पर्तों को हटाते जाते हैं वैसे ही वैसे प्रकाश बढ़ता जाता है जब सारे पर्त अलग होजाते हैं तो स्वच्छ बिजली की बत्ती निकल आती है और उसके प्रकाश से चारों ओर जग मग होने

लगता है। जलाने वाला अङ्गार वही था उसके अन्दर दाहक शक्ति सदा से मौजूद थी परन्तु राख ने उसे ढक दिया था बिजली की बत्ती वैसी ही जल रही थी परन्तु कपड़े के पर्तों से ढके होने से प्रकाश बन्द था। यही बात मनुष्यकी है वह अनन्त शक्तियों का भण्डार है किन्तु दुर्वासना, दुर्भावना, कुविचार, भोग लिप्सा, अनीति आदि आवरणों के पर्तों से वे ढक जाती हैं। यह पर्त उतने अधिक मात्रा में जमा होजाते हैं कि मनुष्य एक बहुत ही तुच्छ, निर्बल, असहाय बेबस, और दीन हीन प्राणी मात्र रह जाता है पशु पक्षियों और कीट पतङ्गों की अपेक्षा भी उसका बल साहस, और सुख कम रह जाता है। तरह तरह के कष्टों से रोता कलपता रहता है, अपने छोटे मोटे दुख दारिद्रों को भी वह हटा नहीं पाता। ऐसी पतित अवस्था में पड़ा हुआ जीव यदि आध्यात्मिक सिद्धि को देखकर हैरत में पड़ जाता है और उनके आस्तित्व पर अविश्वास करने लगता है तो इसमें कुछ आश्चर्य की बात नहीं है।

जब हम अपनी कुवासना और दुर्भावनाओं को हटाकर सद्वृत्तियों और सद्भावनाओं को निखारते हैं तो आत्म तेज निर्मल होकर अपनी अनंत महत्ताओं को प्रकट करने लगता है। यह प्राकट्य ही सिद्धि है। पातञ्जलि योग सूत्र जिन्होंने पढ़ा है वह जानते हैं कि यम-नियम (अहिंसा, सत्य, आस्तेय ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर प्रणिधान) यह सिद्धियों के मूल स्तोत्र हैं। अहिंसा पालन करने से, उसके समीप पहुंचने वाले आपस का बैर भाव भूल जाते हैं गाय सिंह पास बैठे रहते हैं। सत्य का पालन करने से-वाणी सत्य होती है जो श्राप वरदान दिया जाय सुफल होता है। आस्तेय का पालन करने मे सब रत्नों की प्राप्ति होती है, लक्ष्मी की कमी नहीं रहती। अपरिग्रह से पूर्व जन्मों का हाल मालूम होता है। तप से शरीर हलका और दूर दृष्टि मिलती है आदि।" पातञ्जलि के इस कथन पर गम्भीरता पूर्वक विचार करने से प्रतीत होता है कि यह सिद्धियां बाहर से प्राप्त नहीं होतीं। कोई पुरुष्कार की तरह इन्हें प्रदान नहीं करता वरन् यह सब अपनी आन्तरिक योग्यताओं का निखार मात्र है। हिन्सा, असत्य, चोरी, व्यभिचार, लोभ, मलीनता, तृष्णा, आलस्य, अविद्या, नास्तिकता आदि दुर्गुणों के कारण भीतर की दिव्य शक्तियाँ निर्बल, कुंठित और नष्ट भ्रष्ट हो जाती हैं। जैसे जैसे इन कमजोरियों को हटाकर हम अपनी स्वाभाविक, सात्विक अवस्था की ओर चलते हैं वैसे ही वैसे हम सफल, विजयी, समृद्ध, सिद्ध और महान् बनते जाते हैं।

इष्ट सिद्धि के पथ पर

(डाक्टर रामचरण महेन्द्र एम. ए. डी. लिट्)

तुम्हारे भीतर ऐसी महान् शक्ति अन्तःनिर्हितहैं जिसका ज्ञान होने पर तुम अन्यों के आश्रित नहीं रह सकते। दूसरे के विचारों का जादू तुम पर नहीं चल सकता। तुम्हें यह प्रतीत होना अनिवार्य है कि ज्यों ज्यों मनुष्य की गुप्त शक्तियों का विकास होता है त्यों त्यों वह दवाब व बंधन से उन्मुक्त होता चलता है। मनुष्य की उन्नति निज शक्तियों के विकास से होती है जादू से नहीं।

अपनी विशेषता मालूम कीजिए—यही अग्रसर होने की आधार शिला है। विश्व का प्रत्येक पुरुष, बालक, स्त्री यहाँ तक कि जानवर भी एक विशेषता लेकर जन्मा है। परमेश्वर ने अन्य शक्तियां तो उसे प्रदान साधारण रूप में की ही हैं किन्तु प्रत्येक व्यक्ति में एक विशिष्टता (Ssrong point) एक महत्ता, एक खास तत्त्व अन्य तत्वों की अपेक्षा तीव्रतर है। जब मनुष्य इस विशेषता को जान जाता है और निरंतर उसी के विकास में अग्रसर होता है तो उस विशेष दिशा में वह सब से अधिक उत्कृष्टता उपार्जन करता है।

क्या तुमने कभी अपनी प्रतिभा (Special-talent) को जानने की चेष्टा की है ? क्या तुम ने आत्म निरीक्षण किया है ? प्रत्येक प्रगतिशील बड़ा बनने वाला व्यक्ति तर्क की कसौटी पर अपने आपको कसकर इस महान् सत्य के साक्षात्कार का उद्योग करता है। तुम व्यापक दिव्य दृष्टि से अपने आप अपना अध्ययन करो, निराश न हो। कार्य कठिन है पुनः पुनः उद्योग करो।

जो मनुष्य काम, क्रोध, आदि आवेशों से उद्विग्न रहते हैं वे आत्म-निरीक्षण नहीं कर पाते। वे उस पवित्र तत्त्व को जले भुने रहकर नहीं पा सकते। कुछ अपने विचारों की सङ्कीर्णता तथा पाण्डित्य के दंभ से अपनी आत्मा को इतना जकड़ लेते हैं कि उनके अन्तरिक्ष में ज्ञान का प्रकाश नहीं घुसने पाता। सङ्कीर्णता, परदोष दर्शन, दम्भ क्रमशः रूढ़ियां स्थापित करती हैं कालान्तर में वे विचार-धारा को मिथ्या कल्पना से बांध लेती हैं, आत्म निरीक्षण रुक जाता है, ज्ञान का मुक्त प्रवाह अवरुद्ध हो जाता है, वाणी तेज हीन एवं निस्सार हो जाती है।

आत्म निरीक्षण कीजिए—मानसिक आलस्य की घृणित गुदड़ी उतार फेंको. सत्य के व्यापक रूप को अनुभव करने के लिये रूढ़ियों के ऊपर उठो। शान्त चित्त हो नेत्र मूंदकर बैठ जाओ, शरीर और मन को शिथिल करलो, सब विचारों को हटाकर केवल "आत्म निरीक्षण" की भावना पर चित्त वृत्तियों को एकाग्र करो। विचार कर अपने प्रत्येक कार्य पर अन्तर्दृष्टि फेंको। मन में दृढ़ता पूर्वक कहो, "मैं प्रतिभा प्राप्त करना चाहता हूँ। कौन कार्य में मेरी विशेषता है—चित्रकारी, कविता, ज्ञान विद्या, अर्थोपार्जन. लेखन या व्यापार—मुझे किस क्षेत्र में अग्रसर होना चाहिए। किस बात को मैं भली भांति सुन्दर रीति से कर सकता हूं। मेरे हृदय में जो उत्तम उत्तम प्रेरणाएं उठती हैं उन में से किस एक पर मैं अपने जीवन को लगा दूं। एक बार चुन कर मैं अपने व्रत पर स्थिर रहूंगा।"

ध्यान पूर्वक आत्म ध्वनि को सुनो। खूब विचार कर लो उद्विग्न न हो। सब विचारों को निकालकर मनमें अपनी विशेष प्रतिभा को प्रकट करो। सौ चक्षुओं वाले Argus की तरह मन की प्रत्येक क्रिया का सूक्ष्म निरीक्षण करते रहो। चित्त के प्रबल वेग के साथ बह न जाओ वरन् उनसे पृथक् होकर मन के दृष्टा बने रहो। क्रमशः मन का व्यापार देखते २ तुम तुरीयावस्था पर प्रविष्ट हो जाओगे। यही अभ्यास राजयोग की सर्वोच्च समाधि है। एकान्त में पन्द्रह बीस मिनट दिन या रात्रि में जब अवकाश प्राप्त हो अभ्यास की साधना करते रहो।

जो पुरुष निज चित्त का निरीक्षण करता २ चित्त की तरंगे निज आधीन कर लेता है उसने साधना की पहली मंजिल पार करली है।

श्रद्धा जागृत करो—एक अपरिमित शक्ति तुम्हारे साथ है। तुम्हें निज श्रद्धा को जागृत करना है। कितनी ही महान् वस्तु की कामना क्यों न हो प्रत्युत्पन्नमतित्व या उपायोद्भावन क्षमता से आवश्यक वस्तु दूसरी नहीं हो सकती। श्रद्धा की न्यूनाधिक मात्रा प्रत्येक में प्रस्तुत केवल उसे जगाना भर है। इष्ट सिद्धि के पथ पर अग्रसर होने का तात्पर्य है इन्द्रिय से दूर किन्तु श्रद्धा से उद्भूत जो महान् अज्ञात तत्त्व उसमें प्रविष्ट होगी।

"मैं निर्विघ्न आगे बढ़ सकता हूं। उन्नति की शक्ति मुझमें अवश्य है" जब यह दृढ़ विश्वास जागृत होता है तो मनुष्य अपने जीवन का नया पृष्ठ खोलता है। इस जागरण (Awakening) को तुम सब धर्मों से उच्च समझो। इसमें गहरी सचाई है। इस निर्भयता के विचार को क्षण भर के लिये आत्मा में दृढ़ करो। जैसे माली नित्य पानी देकर पौधे को बढ़ाता है तुम नित्य प्रति इस तत्त्व की अभिवृद्धि करते रहो।

श्रद्धा तुम्हारी आत्मा का एक अंश है। मनुष्य

की सब सिद्धियां उसमें प्रस्तुत श्रद्धा की न्यूनता या आधिक्य के अनुसार ही सम्पन्न होती है । अनुभूत नियम है—"श्रद्धा के अनुसार"—यही महत नियम मनोवांछित वस्तु का निरूपण करता है श्रद्धा द्वारा तुम अपने को इतने बलवान् अनुभव करते हो कि तुम जो चाहो कर सकते हो।

हम निरंतर इस असीम शक्तिमय जगत् में क्रीड़ा कर रहे हैं हमारा जीवन प्राण और प्रत्येक श्वाँस प्रश्वास उसी में ओत प्रोत है और आत्म-विश्वास द्वारा वह शक्ति हमारे अधिकार में आ जाती है। विघ्नों से भयभीत होकर तुमने कायरता को निज अन्तःकरण में प्रविष्ट कर दिया है । संशय, भ्रम, कायरता का शिरच्छेद करो । दृढ़ निश्चय, तीव्र इच्छा और प्रबल प्रयत्न द्वारा अपनी गुप्त सामर्थ्य को प्रकट करो।

सिद्धि का मूल मन्त्रः—तुम अन्तिम निर्णय कर चुके हो और तुम्हारी श्रद्धा भी प्रज्वलित हो उठी है। अब आंधी तूफान में उस निश्चय पर चट्टान की तरह दृढ़ बने रहो। जो व्यक्ति दृढ़ता से अपने उद्देश्य पर लगे रहते हैं उन से कोई टकराने का साहस नहीं करता।

हिन्दुपति शिवाजी एवं प्रणवीर प्रताप ने यवनों का आधिपत्य अस्वीकार करने का निश्चय किया। फिर पराजय, क्षुधा तृषा उन्हें निर्दिष्ट पथ से विचलित न कर सके। गांधीजी की दृढ़ता कठिन कारागारों में भी निर्भय बनी रही। मनुष्य की अधोगति करने वाली भय के समान दूसरी कोई वस्तु नहीं।

अन्तमन से भय की सूक्ष्म भावना को उखाड़ दो। जब २ नैराश्य ग्लानि, शोक, चिंता और द्वेष के घातक विचार तुम्हें बरबस निकृष्टता की ओर खींचें तो तुम निज लक्ष्य की शुभ्र भावना को प्रकट करने की चेष्टा करो । इच्छित पदार्थ के विचारों को वृहत् संख्या में अन्तर्जगत् मे प्रवेश करने दो। इन परम विशुद्ध संस्कारों को अन्तर्मन सुदृढ़ करो। इन्हीं में निरंतर रमण करते रहो। रात्रि में दिन के विचार स्थायी मनोवृत्ति (Fixed ideas) बनते हैं, अतः रात्रि में शयन से पूर्व शरीर व मन दोनों को निश्चेष्ट करो आत्म चिंतन में प्रविष्ट हो जाओ। निद्रा से पूर्व इष्ट प्राप्ति की वृत्ति में आरूढ़ रहने का प्रयत्न करने से तद्रूप चित्र की रचना हमारे मस्तिष्क में होती है और उसकी स्थायी छाया हमारे हृदय पर पड़ती है। अभ्यास द्वारा क्रमशः मन अनात्म पदार्थों से विमुख हो शिव सत्य-आनन्द स्वरूप हो जाता है। तत्पश्चात् जागृत स्वप्न-सुषुप्ति तीनों अवस्थाओं में इष्ट के अतिरिक्त विचार क्रिया कहाँ जा सकती है।

विचारों एवं क्रिया का समन्वय—एक ऐसी चट्टान है जिस पर टकराकर कितने ही साधक पद च्युत होते हैं। यदि हम स्थिति का ध्यान पूर्वक मनन करें तो हमें ज्ञात होजायगा कि प्रति दिन नई नई योजनाएँ तो हम बनाया करते हैं पर शोक ! महा शोक !! हम मन, बचन, काया से उस आदर्श पर स्थित नहीं रहते। केवल हम अभिलाषा मात्र ही करते रहें और उसकी सिद्धि के हेतु कुछ प्रयत्न न करेंगे तो जल तरङ्ग के अनुरूप उनका उत्थान एवं पतन मन का मन ही में रह जायगा।

अभिलाषा तभी फलवती होती है जब वह क्रिया में प्रकट की जाय। फल की प्राप्ति के हेतु दृढ़ निश्चय एवं क्रिया दोनों ही कार्य करें।

जो जो व्यक्ति इच्छित सामर्थ्य प्रकट कर सके उन्होंने विचारों को क्रियात्मक स्वरूप (Practical Shape) प्रदान किया। तुम कितना सोचते और कितना करते हो ? क्या कुछ विचार बिना तुम्हारे कामों में प्रकट हुए यों ही नष्ट भ्रष्ट हो जाते हैं ? क्या तुम्हारे विचार दुख, पाप, चिंता में बर्बाद हो जाते हैं ? क्या प्रयत्न के द्वारा तुम अन्तर्निहित गुप्त सामर्थ्य को प्रकट कर रहे हो ?

आज तक सफलता के लिये किसी स्वर्ण पथ का निर्माण नहीं हुआ स्वयं अपना पथ निर्माण करना है। यदि तुम केवल ढूंढ़ते ही रहोगे तो सम्भ-

आयु पर्य्यन्त तुम पुष्प शय्या न पा सको, परन्तु यदि तुम एक एक पुष्प एकत्रित कर किसी भी मार्ग पर उन्हें बिछाने में संलग्न हो जाओगे तो निश्चय ही तुम्हारी साध पूर्ण हो जायगी सिद्धि बाजार से खरीद नहीं सकते, न अन्य किसी की सहायता से प्राप्त कर सकते हो। वह तो स्वयं निजी बल से अर्जित तत्त्व है।

सिद्धि में सहायक—तत्त्वों में उत्साह प्रमुख है। संसार के महत्कार्य प्रायः उत्साह से सम्पन्न होंगे। जब मनरूपी पानी, उत्साह रूपी अग्नि और भाप रूपी इच्छा को प्रस्तुत रक्खोगे तो तुम निज दुर्गम कठिनाइयों को आशातीत सुलभ कर लोगे। यदि तुम निज उत्साह की अग्नि को धीरे २ सुलगाने दोगे तो इच्छा रूपी भाप न प्रकट होगी और तुम मनोरथ रूपी यंत्र से कार्य न ले सकोगे।

उत्साह मन की प्रबल कार्यकारिणी शक्ति है जो उसके प्रत्येक कार्य, प्रत्येक विचार और प्रत्येक आकांक्षा में समाया रहता है। इष्ट सिद्धि के प्रयत्न के पहिले तुम में समुचित उत्साह प्रस्तुत होना चाहिए क्योंकि उसी के प्रमाणानुसार तुम्हें सिद्धि प्राप्त होगी।

अनेक व्यक्ति का जोश शीघ्र शान्त होजाता है, दिल मुरदा सा रहता है, शरीर अशक्त हो उठता है और वे निर्बल रह जाते हैं। छोटे छोटे व्यक्ति भी अदम्य उत्साह के कारण बड़े २ योद्धा, सेनापति, करोड़पति एवं राज्याधिकारी बन जाते हैं।

उत्साह क्या कार्य करता है? वह मनके स्वभाव को रचता है, विश्वास को दृढ़ करता है आकांक्षा को बल पहुँचाता है, अनेक गुप्त शक्तियों को प्रकट करता है और अन्त में सफलता के प्रासाद में लाकर प्रविष्ट करा देता है।

द्वितीय सहायक दृढ़ इच्छा है। एक बलवान् इच्छा किसी वृहत् कार्य सम्पन्न करते समय उसके शत्रुओं से युद्ध करती है। जिसकी इच्छा चट्टान् सदृश है वही वास्तव में सफल बनेगा। ऐ! जीती जागती इच्छा, तेरी तीव्रताके सन्मुख बाधा सब परास्त हो जाँयगी किन्तु न अजय बनी रहेगी। प्रकृति के समस्त अस्तित्व में—चाहे सजीव है या निर्जीव इच्छा शक्ति (Will Power) ही कार्य करती है। तुम निज इच्छा मंद न होने दो उसे तीव्र तर करते रहो।

तुम निज आकांक्षाओं को अपने मनः केन्द्र से न हटने दो। सब महा पुरुषों की सफलता औ सामर्थ्य का रहस्य यही है कि वे समग्र शक्तियों क निज लक्ष्य पर एकाग्र कर देते थे। लक्ष के अतिरिक्त अन्य विजातीय तत्त्वों को बाहर निकाल फेंकते थे। दुर्बल से दुर्बल चित्त वाला भी निज शक्तियों को एक लक्ष्य पर केन्द्रित करने से, एक ही वस्तु पर समग्र शक्ति लगाने पर असाध्य से असाध्य कार्य में सिद्धि प्राप्त करता है।

सर्व समर्थ प्रभु—के अतिरिक्त कोई भी साध फलीभूत नहीं होता। श्रीमद्भागवत् में कश्यप मुनि ने इच्छा पूर्ति का यह मार्ग दर्शाया है। इच्छा पूर्ति में इसका बड़ा महत्त्व है—

उपतिष्ठस्व पुरुषं भागवतं जनार्दनम्।
सर्व भूत गुहावासं वासुदेवं जगद्गुरुम्॥
स विधास्यति ते कामान् हरिर्दीनानुकम्पनः।
अमोघा भगवद्भक्तिर्नेतरेति मतिर्मम॥

"हे अदिति! तू उन समस्त प्राणियों के हृ में अन्तर्यामी रूप से व्यापक जगद्गुरु की उपास कर, दीनों पर दया करने वाले वे हरि तेरे मनोरथ पूर्ण करेंगे। भगवान् की भक्ति अमोघ है इसके समान अन्य कोई भी साधन नहीं है मेरी निश्चित बुद्धि है।

अतएव सिद्धि के लिए भगवान् की श लीजिए। भगवान् का प्रवचन है—

"मयि युञ्जतो चेत उपतिष्ठन्ति सिद्धयः

अर्थात् हे उद्धव! मेरे में मन एकाग्र करने के पास सिद्धियाँ स्वयं चल कर आ जाती हैं

भगवान् के किसी स्वरूप विशेष की अन

मन से कल्पना कर उसमें प्रतिष्ठ होने का अभ्यास करना चाहिए। सर्व प्रथम भगवान् की मूर्ति के एक एक अवयव का पृथक् पृथक् ध्यान कर पश्चात् दृढ़ता के साथ सभी मूर्ति में मन स्थिर करना चाहिए। मूर्ति के ध्यान में निज अस्तित्व विस्मृत कर कल्पना प्रसूत सामग्रियों से मानसिक पूजा करनी चाहिए। इस यौगिक क्रिया से मुझे मनको निश्चत करने में बड़ी सहायता प्राप्त हुई है।

विजयी जैसा अभिनय कीजिए—यदि तुम सिद्धि प्राप्त करना चाहते हो तो विजयी सैनिकों जैसी चेष्टा करो, उन्हीं जैसा रिहरसल करते रहो। जो कुछ गुण तुम सिद्ध पुरुषों में समझते हो—निर्भयता, सबलता, साहस—उन्हीं तत्त्वों को प्रकट करो दूसरों को दिखाओ कि तुम वास्तव में प्रगति पथ पर अग्रसर हो रहे हो। अपने नेत्र से साहस की चिनगारियाँ निकालने का अभिनय करो। उत्कृष्ट तत्त्वों के पदार्पण से कमजोरियां स्वतः निकलने लगेंगी। यह कभी न सोचो कि तुम विजय प्राप्त करने के योग्य नहीं हो या महान् पुरुष बनने के लिए जन्म से ही ... नहीं कर सकते हैं।

किसी शान्त कमरे में सीधे खड़े हो जाओ। विचारों को समेटो और खड़े रहने की क्रिया में अपने प्रत्येक अवयव में क्रिया शक्ति प्रवाहित करो। दृढ़ता पूर्वक कहो—"मैं वीर सिपाही हूं, मेरे अंग प्रत्यंगों से वीरत्व प्रकट हो रहा है। मैं ऊँचा उठ रहा हूं, मेरा लक्ष्य ऊँचा है और मैं भी अब सांसारिक क्षुद्रता से ऊंचा जा रहा हूं। मैंने अपने समस्त दोषों पर पूर्ण विजय प्राप्त करली है, अपनी योग्यता एवं सामर्थ्य में मेरा विश्वास अटल हो गया है। मुझमें परमात्मा का अनन्त बल है जो मेरे प्रत्येक अवयव को विजय प्रदान कर रहा है। अब मैं कठिन से कठिन कार्य को सरलता से सम्पन्न कर लूंगा। मैंने अपनी अंतःस्थित ईश्वरीय शक्ति का यथार्थ ज्ञान प्राप्त कर लिया है। मुझे अपनी सफलता का पूर्ण निश्चय है।"

क्रमशः उक्त वाक्यों को दुहराते हुए कमरे में टहलो। तुममें अपने सामर्थ्य की भावना प्रबल रहे। तुम शक्ति प्राप्त करने के लिए उत्साहित रहो। टहलते टहलते मन में कहो—"अब मेरा जीवन किसी विशेष उद्देश्य पूर्ति के लिए है। मैं यों ही मारा मारा नहीं फिरता हूं। प्रत्युत मैं अब निरन्तर आगे बढ़ रहा हूँ। मेरे दिव्य गुण प्रकट हो रहे हैं। मैं जो कुछ करता हूं उसे दृढ़ता एवं तत्परता से करता हूं। मैं अपने भाग्य का स्वयं विधाता हूं। मैं कभी पराजित होना जानता ही नहीं हूँ। मैं अपनी धुनका पक्का हूं। मुझे अपनी शक्तियों पर पूरा पूरा भरोसा है। मुझे अपनी शक्तियों पर पूर्ण विश्वास है। मेरी शक्ति का विरोध बाह्य शक्तियां नहीं कर सकती।" ... अश हो। तुम्हारे भीतर जो शक्तियों का महान् केन्द्र है वह इन आत्म संकेतों से क्रमशः प्रदीप्त हो उठेगा।

हमारे उच्चरित शब्दों में बड़ा बल है। जब उन में इच्छा शक्ति का समावेश होता है तब ये अत्यन्त प्रभावशाली हो उठते हैं। प्रातःकाल जागते समय उक्त मानसिक क्रिया को करने से दिन भर स्फूर्ति रहेगी। रात्रि में सोने से पूर्व करने पर रात्रि में अन्तर्जगत् में ये ही सङ्कल्प दृढ़ता से अंकुरित हो जायेंगे। मन को जिस प्रकार की आज्ञा दृढ़ता से मिलेगी वह उसी का पालन करेगी। अपने ...

सिद्धि-साधन और साधक

(श्री महेशवर्मा, हर्बर्ट, कोटा)

अनेक साधक सिद्धि जैसे गुरुतर कार्य के साधारण ज्ञान साधन--पथ पर अग्रसर होते हैं, किन्तु शिथिलता और चञ्चलता के कारण मनःशक्ति का पूर्ण विकाश नहीं कर पाते। अनेक मुमुक्षु आरोग्य--रहित शरीर तथा अशुद्ध एवं अस्थिर मन से ही आध्यात्मिक साधनों के अनुष्ठान में प्रवृत्त होते हैं, परन्तु सफलता उन्हें भी प्राप्त नहीं होती। आध्यात्म विद्या का यह एक अनुभूत तत्व है कि इच्छित वस्तु या इष्ट परिस्थिति प्राप्त करने के लिए मानसिक चित्र कल्पना के समान अमोघ एवं सरल अन्य साधन नहीं है। किसी विशिष्ट दिशा में उन्मुख होने के निमित्त उसके साधन निर्दोष होने की अत्यन्त आवश्यकता रहती है। बिना दृढ़ता के आत्मा अनन्त शक्तिमान् होने पर भी अपनी कुछ भी शक्ति प्रकट नहीं कर सकता।

सिद्धि के हेतु सदा सर्वदा अपनी इच्छित वस्तु का गहन चिन्तन कीजिए क्योंकि जिस प्रकार बीज में सम्पूर्ण वृक्ष सूक्ष्म रूप से रहता है वैसे ही अन्तर जगत् में यह सम्पूर्ण स्थूल जगत् सूक्ष्म बीज रूप से रहा हुआ है, और जब अन्तर जगत् में उपस्थित किसी वस्तु के सूक्ष्म रूप संस्कारों का दृढ़ भावना से पोषण किया जाता है तब वह वस्तु बाह्य जगत् में स्थूल रूप धारण किये बिना कभी नहीं रह सकती— यह आध्यात्म शास्त्र का अबाधित सिद्धान्त है।

को परिवर्तित कर देने वाला मनुष्य ही जादूगर है। शब्द की शक्ति श्रद्धा और मन्त्र जप से है।

तुम्हें दस बार भी यदि पराजय हो तो कदापि निराश न हो, यदि सौ बार भी असफलता हो तो भी खड़े होकर पुनः अपने कार्य में सलग्न हो जाओ। चाहे हजार बार नाकामयाबी हो, सत्य मार्ग पर आरूढ़ हो जाओगे और उस पर लगे रहोगे, तो अवश्य सफलता तुम्हारी है।

वशीकरण-मधुर भाषण।

भोजन के छहों रसों में मधुर रस अग्रिणी है। बच्चे से लेकर बूढ़े तक सभी मीठे को पसन्द करते हैं। मधुरता से मनुष्य तो क्या देवता भी प्रसन्न होते हैं। हवन यज्ञों में मीठे का भाग अवश्य होता है। ब्रह्म-भोज में मीठे की प्रधानता रहती है।

संसार में सब से अधिक मीठी वस्तु "मीठी बोली है। मधुर भाषण जैसी मिठास भला और कहां मिल सकती है। तुलसीदासजी कहते हैं–"वशीकरण एक मंत्र है—'तजदे बचन कठोर।" रहीम कहते हैं—"कागा काको धन हरे कोयल काको देय। मीठे बचन सुनाय कर जग बश में कर लेय।" हिरन मधुर शब्द सुनकर भागना भूल जाते हैं, बीन सुनने के लिए सांप बिल से बाहर निकल आते हैं। एक विद्वान् का कथन है कि—प्रिय भाषण में वशीकरण की शक्ति है। इससे पराये अपने होजाते हैं। सर्वत्र मित्र ही मित्र दृष्टिगोचर होते हैं। मधुर भाषण एक देवी वरदान है, मोहनास्त्रों में इसे शिरोमणि कह सकते हैं।

सत्य भाषण, हितकर भाषण, प्रिय भाषण, यह वाणी की सिद्धियां हैं। यह आत्म संयम, स्वार्थ त्याग और प्रेम भावना से आती है। जिसके मन वचन और कर्म में दूसरों के प्रति मधुर भाव है उसे वशीकरण विद्या का पूर्णज्ञाता ही समझिए, जड़ चेतन सभी उसके वश में हैं, मुट्ठी में है।

किसी से कडुए शब्द मत बोलिए। क्रोध में भी किसी को अपशब्द मत कहिए। छोटों से भी 'तू' जैसा कष्ट कटु संबोधन मत कीजिए। मधुर बोलिए विनय पूर्वक बोलिए, लाभदायक बोलिए, सद्भाव के साथ बोलिए फिर देखिए कि सब लोग मन्त्र मुग्ध की तरह कैसे आप के बश में होजाते हैं।

पारस कहां है ?

जिस वस्तु के स्पर्श मात्र से लोहे जैसी निम्न कोटि की धातु स्वर्ण जैसी बहुमूल्य बन जावे, ऐसे किसी पदार्थ को प्राप्त करने के लिये दुनियाँ बहुत समय से प्रयत्नशील है । मनुष्य की इच्छाओं में तीन इच्छाएं सर्वोपरि है—(१) जीवन इच्छा (२) धन इच्छा (३) सफलता की इच्छा। इन तीनों का मन मानी मर्यादा में पूर्ति होते हुए देखने का स्वप्न मनुष्य बहुत प्राचीन काल से देखता चला आ रहा है। जीवन को स्थायी देखने के लिए अमृत की कल्पना की गई । समस्त मनोवाञ्छाओं की पूर्ति के लिए कल्पवृक्ष की मानसिक रचना हुई। धन के, स्वर्ण के, बाहुल्य के लिए पारस नामक किसी वस्तु तक मस्तिष्क ने दौड़ लगाई। क्षण भर में बिना अधिक समय और परिश्रम किये इच्छित वस्तुऐं प्राप्त करने की आकांक्षा मनुष्य को इतनी बेचैन किये रही है कि जब वह इन वस्तुओं को प्राप्त न कर सका तो किन्हीं काल्पनिक पदार्थों के अस्तित्व का सपना देखना आरम्भ किया और अपनी चिर लालसाओं को किसी प्रकार बहलाया।

१ कहते हैं कि पारस पत्थर किन्हीं किन्हीं पहाड़ों पर होता है पर उसे कोई पहचान नहीं पाता। पहाड़ी चरवाहे बकरी के खुरों में लोहे की कीलें ठोक देते हैं जब कभी वे बकरियाँ पारस पत्थर के ऊपर से निकलती हैं तो वे कीलें सोने की हो जाती हैं। चरवाहे उन्हें निकाल लेते हैं और फिर नई लोहे की कीलें उसी जगह लगा देते हैं। नानी की कहानियों में कहा जाता है कि मादा सुअर जब अपने बच्चे को दूध पिलावे तब अगर कुछ बूँदे इधर ईंट पत्थरों पर गिर पड़े तो वे सोने के हो जाते हैं। कहा जाता है कि बुन्देल खण्ड के राजा चन्देल के यहाँ पारस पत्थर था। इस प्रकार की और भी अनेक किम्वदन्तियां प्रचलित है । साधु महात्मा लोग तांबे को किसी विधि से सोना बना देते हैं, ऐसे विश्वास भी लोगों में फैले हुए हैं। रसायनी विद्या का लटका दिखाकर तथाकथित साधु लोग बेचारे भोले भाले लोगों की चुटिया मूड़ते हैं। उन्हें अपने चेला पंथी चक्कुल में फँसाये रहते हैं। परन्तु भली प्रकार ढूँढ खोज करने पर अब इस नतीजे तक पहुंचा गया है कि ऐसी न तो कोई वस्तु है जिसे छूने से लोहा सोना बन सके और न ऐसी कोई विद्या है जो तांबे को सोना बना सके। यदि किसी एक भी आदमी को ऐसी कोई वस्तु या विद्या मिली तो उसी दिन सोना-सोना न रहेगा, वह पीतल और काँसे की तरह एक साधारण धातु रह जायगी । सोना इसी लिये सोना है कि वह कठिनाई से और थोड़ी मात्रा में मिलता है। जब वह आसानी से और बड़ी मात्रा में तैयार होने लगा तो उसकी कोई कीमत न रहेगी, तब शायद एक रुपये का दो सेर सोना बिकने लगे।

हमें उस काल्पनिक, अस्तित्व रहित, पारस के लिए ललचाने और मुँह में पानी भरने की आवश्यकता नहीं है। क्योंकि इस संसार में एक ऐसा पारस बहुत पहले से मौजूद है जिसके स्पर्श मात्र से कम मूल्य की रद्दी सद्दी चीजें क्षण भर में बहुमूल्य, बेश कीमती, बन जाती है। यह पारस परमात्मा ने अपने हर एक पुत्र को दिया है ताकि यदि उसे हीन वस्तुओं से या हीन वातावरण से ही काम चलाना पड़े तो इस पारस को उनसे छुआकर तुरन्त ही उन्हें बहुमूल्य बना लिया करें। यह वस्तु अदृश्य, अप्राप्त, काल्पनिक या अवास्तविक नहीं है। अनेक व्यक्तियों के पास वह आज भी मौजूद है। उसे काम में लाते हैं और लाभ उठाते हैं। इस दुनियां में दौलतमंदों की कमी नहीं है। ऐसे लोग अब भी भारी संख्या में मौजूद हैं जिनके पास एक विशेष प्रकार का पारस पत्थर मौजूद है और उसके द्वारा वैसे ही वैभवशाली, सुखी, सन्तुष्ट तथा प्रसन्न हैं जैसा कि लोहे को सोना बनाने वाले पारस के पास में होने पर कोई होता।

यह पारस क्या है ? यह है-प्रेम। एक काला

कलूटा आदमी जिसे आप पूर्णतया कुरूप, गँवार या असभ्य कह सकते हैं, अपनी स्त्री के लिए कामदेव सा रूपवान और इन्द्र के समान सामर्थ्यवान है। जैसे शची अपने इन्द्र को पाकर प्रसन्न है उसकी सेवा करती है और अपने को सौभाग्यशालिनी मानती है वैसे ही एक भीलनी अपने अर्धनग्न और धनहीन भील को पाकर प्रसन्न है। विचार कीजिए कि इसका कारण क्या है? जो आदमी सब को कुरूप और गन्दा लगता है वह एक स्त्री को इतना प्रिय क्यों लगता है? इसका कारण है-प्रेम। प्रेम एक प्रकार का प्रकाश है, अँधियारी रात में आप अपनी बैटरी की बत्ती से किसी वस्तु पर रोशनी फेंकें तो वहवस्तु स्पष्ट तक चमकनेलगेगी,जबकि पास में पड़ी हुई दूसरी अच्छी अच्छी चीजें भी अँधयारी के कारण काली कलूटी और श्री हीन ही मालूम पड़ेगी। तब वह वस्तु जो चाहे सस्ती या भद्दी क्यों न हो बैटरी का प्रकाश पड़ने के कारण स्पष्ट तथा चमक रही होगी. अपने रङ्ग रूप का भला प्रदर्शन कर रही होगी, आंखों में जँच रही होगी। प्रेम में ऐसा ही प्रकाश है। जिस किसी से भी प्रेम किया जाता है वही सुन्दर, गुणकारी, लाभदायक, भला, बहुमूल्य, मन भावन मालूम पड़ने लगता है। माता का दिल जानता है कि उसका बालक कितना सुन्दर है। अमीर अपने हीरे जवाहरात और महल तिवारी की जैसी कीमत अनुभव करते हैं गरीबों को अपने टूटी फूटी, झोंपड़ी, फटे पुराने कपड़े और मैले कुचैले सामान से भी वैसी ही ममता होती है।

दार्शनिक दृष्टि से विवेचना करनें पर मालूम होता है कि वस्तुऐं स्वतः न तो बहुमूल्य है और न अल्प मूल्य। मनुष्य का जो प्रिय विषय होता है उस की पूर्ति जिन साधनों से होतीहै उन्हें ही वह सम्पत्ति समझता है। जिस सीमा तक अपनी मनोवाञ्छा की पूर्ति होती है उतना ही वह साधन सम्पत्ति प्रिय लगती है, यह प्रियता ही बहुमूल्य होने की कसौटी है। धन सम्पत्ति. स्त्री पुत्र आदि वस्तुऐं साधारणतः विशेष मूल्यवान् मालूम पड़ती हैं किन्तु जब इनके ओर से वैराग्य उत्पन्न होता है त्याग भाव आता है तो धूलि के समान निरुपयोगी और व्यर्थ मालूम पड़ने लगती है। गृह त्यागी महात्मा जब सन्यास में प्रवेश करते हैं तो उन्हें अपना सारा वैभव तुच्छ घास के तिनके जैसा मालूम पड़ने लगता है, उसे त्यागने में वे रत्ती भर भी दुख शोक अनुभव नहीं करते। बड़े परिश्रम से मनुष्य रुपया कमाता है परंतु प्रतिष्ठा, विपत्ति, आदि का अवसर आने पर उस रुपये को कंकड़ी की तरह बहा देता है। परिश्रम करते समय उसे रुपया मूल्यवान लगता था तब वह बचा बचाकर जमा करता था जब विपत्ति का अवसर आया तो बिना किसी हिचकिचाहट के वह सारा रुपया उसने खर्च कर डाला, इससे प्रतीत होता है कि रुपया बहुमूल्य नहीं वरन् अपनी रुचि को आवश्यकता को पूरा करने वाले साधन बहुमूल्य है। यदि किसी उपाय से साधारण वस्तुओं को अपनी रुचि पूर्ण करने वाला, प्रसन्नता देने वाला बनाया जा सके तो उस उपाय को पारस कहने में हिचक न होनी चाहिए। जिस वस्तु के द्वारा साधारण कोटि की जैसी तैसी वस्तुऐं भी रुचिकर. आनन्ददायक बहुमूल्य बन जाती है वह पारस नहीं तो और क्या है?

किसी वस्तु को कुछ से कुछ बनाने के लिए एक शक्तिशाली धारा की आवश्यकता है। लोहे को स्वर्ण, लघु को महान बनाने के लिए एक बलवान सत्ता चाहिए। मनुष्य जीवन में भी एक ऐसी सजीव सत्ता मौजूद है जो नीरस उदासीन और तुच्छ वातावरण को दिव्य एवं स्वर्गीय बना देती है। यह सत्ता है-प्रेम। निर्जीव मशीनें बिजली की धारा का स्पर्श करते ही धड़धड़ाती हुई चलने लगती हैं अँधेरे पड़े हुए बल्ब बटन दबाते ही प्रकाशित हो जाते है, बन्द रखा हुआ पंखा विद्युत की धारा आते ही फर फर करके घूमने लगता है और अपनी हवा द्वारा लोगों को शीतल कर देता है। प्रेम एक

...बिजली है वह जिनके ऊपर पड़ती है उसे ... बना देती है। निराश, उदास, रूखे, गिरे हुए और झुंझलाये हुए लोगों को एक दम ... कर देती है वे आशा, उत्साह, उमङ्ग, प्रसन्नता और प्रफुल्लता से भर जाते हैं। देखा गया है कि उपेक्षा और तिरस्कार ने जिन लोगों को दुर्जन बना दिया था वे ही प्रेम की डली चखकर बड़े उदार सद्गुणी और सज्जन बन गये। दीपक स्नेह की चिकनाई को पीकर जलता है मनुष्य का जीवन भी कुछ ऐसा ही है जिसे स्नेह से सींचा गया है उस का दिल हरा भरा और फला फूला रहेगा, जो स्नेह से वंचित है वह रूखा, झुंझलाया हुआ, निराश और अनुदार बन जायगा इसलिए दूसरों को यदि अपना इच्छानुवर्ती, मधुर भाषी, प्रिय व्यवहारी बनाना है तो इस निर्माण कार्य के लिए प्रेम चाहिए। अन्धकार को प्रकाश में निर्जीवता को सजीवता में, मरघट को उद्यान में बदल देने की शक्ति का नाम प्रेम है; इतना चमत्कार पूर्ण सजीव परिवर्तन कर सकने वाली शक्ति का यह पारस कहा जाता है तो कुछ अत्युक्ति की बात नहीं है।

वह पारस जो लोहे को सोना बना सकता है न तो इस दुनियाँ के लिए उपयोगी है और न आवश्यक। क्योंकि अर्थ शास्त्र के नियमानुसार 'पैसा' और कुछ नहीं, श्रम और योग्यता का स्थूल रूप है। यदि श्रम और योग्यता के बिना ही असीम स्वर्णराशि मिलने लगे तो संसार का आर्थिक संतुलन बिलकुल नष्ट भ्रष्ट होजायगा। जिनके पास यह वस्तु होगी ईर्षा के कारण उनके प्राण भी सङ्कट में पड़े बिना न रहेंगे। कोहेनूर हीरा का इतिहास जिन्होंने पढ़ा है वे जानते हैं कि यह बेश कीमती हीरा जिस जिस के पास गया है उसे ईर्षा की आग ने बुरी तरह झुलसाया है। फिर पारस जैसी अद्भुत वस्तु को प्राप्त करने वाले का कुछ क्षण के लिए भी इस संसार में सही सलामत रहना कठिन है कहते हैं कि एक गरीब आदमी ने किसी देवता को प्रसन्न करके यह वरदान प्राप्त किया कि वह जिस वस्तु को छू ले वही सोने की होजाय। जब उसे यह वरदान मिला मन में फूला न समाया। जब घर पहुँचा तो उसने अपनी लड़की की गुड़ियां छू लीं, वह सोने की हो गईं। लड़की ने जब धातु की गुड़ियां देखी तो रोती हुई पिता के पास गई और कहने लगी—पिताजी मुझे तो कपड़े की गुड़िया चाहिए। पिता ने सान्त्वना देने के लिए लड़की को गोद में उठा लिया वह भी ठोस सोने की होगई, लड़की को भी देखकर उसकी माता दौड़ी आई, वह भी जरा सा छू गई, छूने को देर थी कि वह भी सोने की हो गई। वह आदमी घबराया जो कुछ हाथ में आता सब सोने का हो जाता, रोटी पानी भी सोने का। भूखों मरने की नौबत आगई। तब उसने उसी देवता से प्रार्थना करके वह वरदान वापिस करवाया।

परमात्मा ने अपने पुत्रों को किसी ऐसी वस्तु से वंचित नहीं किया है जो वास्तव में उसके लिए उपयोगी और आवश्यक है। यह काल्पनिक पारस मनुष्य के लिए हानिकारक और दुखदायी है इस लिये उसका अस्तित्व उपलब्ध नहीं है। हां, आध्यात्मिक पारस प्रेम—जिसकी चर्चा इन पंक्तियों में की जारही है, उपयोगी भी है और आवश्यक भी। जिसने इस पारस को प्राप्त किया है वह अपने चारों ओर स्वर्गीय वातावरण की सृष्टि कर लेता है, सोने का उपयोग यही है कि उससे मानसिक तृप्ति के साधन उपलब्ध होते हैं, इसीलिए सोने का महत्व दिया जाता है, किन्तु जितनी मानसिक तृप्ति सोने द्वारा खरीदी हुई वस्तुओं से होती है, उससे अनेक गुनी इस आध्यात्मिक अमृत-पारस-से हो जाती है।

आप अपने कुटुम्बियों से, मित्रों से, परिचितों से, अपरिचितों से प्रेम किया कीजिए, सब के लिए उचित आदर, स्नेह, उदारता और आत्मीयता का भाव रखा कीजिए। किसी से लड़ना पड़े तो भी आत्मीयता का उदार भाव लेकर लड़िये। अपने निकटवर्ती ...

सिद्धि तुम्हारी जेब में है।

(डाक्टर दुर्गाशङ्करजी नागर सम्पादक "कल्पवृक्ष")

--—❀——

प्रत्येक मनुष्य यह जानता है कि इस जगत् में बिना हाथ हिलाये कुछ नहीं होता एक तिनके के भी दो टुकड़े नहीं हो सकते। बहुत कम लोग ऐसे मिलेंगे जो स्वयं विचार करना जानते हों। वे दूसरों के विचारों के दास हैं। हमेशा दूसरों की सम्मति पर ही वे अपना जीवन व्यवहार चलाते हैं। उनको अपने ऊपर विश्वास नहीं। ऐसे लोग दुःख और विपत्ति के समय दूसरों की सहानुभूति, दया, और करुणा की मार्ग प्रतीक्षा करते हैं। वे अपनी बुद्धि को और अपनी निजता को खो बैठे हैं। इस प्रकार के मनुष्य हमेशा अपने विचारों को बदलते रहते हैं और दुर्भाग्य का रोना रोते रहते हैं।

ऐसे मनुष्य सदा अपने भाग्य को दोष देते रहते हैं। उनके जीवन का उद्देश्य कभी पूरा नहीं हो सकता। जो दूसरों के सहारे पर निर्भर रहते हैं वे किसी बात का निश्चय नहीं कर सकते और कठिनता से किसी बात पर स्थिर रहते हैं, क्योंकि हमेशा दूसरों के विचारों के अनुसार ही कार्य करते हैं।

जब तक मनुष्य अपना स्वामी आप नहीं हो जाता तब तक उसके जीवन का सम्पूर्ण विकास नहीं हो सकता।

जीवन में उन्नति करने के लिए सब से पहिले इस बात को समझने की आवश्यकता है कि जीवन संग्राम में जो रुकावटें आती हैं उनको दूर हटावें। संसार में ऐसे मनुष्यों की कमी नहीं जो दूसरों के विचारों के अनुसार काम करते हैं, जो दूसरों की आज्ञा का पालन करते हैं। इस प्रकार दूसरों का अनुकरण करने से मनुष्य अपनी मौलिकता से हाथ धो बैठते हैं। मनुष्य की उन्नति अपनी शक्तियों के विकास से होती है, न कि अन्धानुकरण से।

स्वयं विचार करने से ही मनुष्य में नए नए विचार पैदा होते हैं और उसकी मानसिक शक्तियों का विकास भी होता है। ऐसे मनुष्य के द्वारा ही समाज का कल्याण हो सकता है।

तुम अपने भावी के सृष्टा हो। तुम अपने जीवन को उन्नत और पूर्ण बना सकते हो। दूसरे किसी की सत्ता तुम पर चल नहीं सकती। ब्रह्माण्ड में कोई ऐसी शक्ति नहीं जो तुमपर अधिकार करसके

तुम्हारे भीतर ऐसी महान् शक्ति छिपी हुई है कि इसका ज्ञान होने पर तुम दूसरों के आश्रित नहीं रह सकते। तुमको यह प्रतीत हो जाना चाहिए कि भाग्य तुम्हारे आधीन है और पुरुषार्थ से तुम अपने जीवन को श्रेष्ठतम बना सकते हो।

इस निश्चय को अधिक अधिक पुष्ट करो और फिर इस निश्चय के अनुसार अपने जीवन को उच्च बनाने के लिये जीवन-संग्राम में कूद पड़ो। अपने जीवन रथ की बागडोर अपने हाथ में लेकर श्रद्धा से, उत्साह से अपने उच्च उद्देश्य को लक्ष्य में रख कर अपने रथ को आगे बढ़ाते चलो और तुम अपनी परिस्थितियों पर अधिकार कर सकोगे।

स्नेह, नम्रता और सज्जनता के वचन बोलिए ऐसे ही विचार रखिए, ऐसे ही आचरण कीजिए। आप का मन, वचन और कर्म प्रेम से सराबोर होना चाहिए। सद् व्यवहार आप की प्रधान नीति हो, मधुर भाषण आप का स्वभाव हो, सद्भाव आप का व्रत हो, आपका जीवन प्रेम, भ्रातृभाव, सदाचार, ईमानदारी, सरलता और आत्मीयता की दिशा में अग्रसर होरहा हो। इस ओर जितनी जितनी आप प्रगति करते जावेंगे उतने ही पारस पत्थर के निकट पहुँचते जावेंगे।

लोहे को सोना बनाने के तुच्छ प्रलोभन पर से अपना ध्यान हटाइए, लोहे जैसे कलुषित हृदयों को स्वर्ण सा चमकदार बनाने की विद्या सीखिये। यह विद्या सच्ची रसायनी विद्या है, यह पारस सच्चा पारस है। जिसके पास यह है उसके पास सब कुछ है।

———

मुफ्त का माल दुख देता है।

एक ऊंट बड़ा आलसी था । चरने के लिए जंगलों में जाना और परिश्रम करना उसे बहुत बुरा लगता था। उसकी इच्छा थी कि कोई ऐसी तरकीब निकले कि घर बैठे बैठे ही मनचाहा भोजन मिल जाया करे ।

एक दिन उधर में महादेव पार्वती जा रहे थे। ऊँट ने उन्हें देखा और अपनी इच्छा पूर्ति का अच्छा अवसर देख कर उनके सामने गरदन झुका कर जा खड़ा हुआ।

इस प्रकार रास्ता रोके खड़े ऊंट को देखकर महादेव जी ने उससे पूछा-कहो भाई क्या बात है ? ऊंट बोला-हे त्रिभुवन के स्वामी, आप अनाथ के नाथ हैं. दीनों का दुख हरने वाले हैं, भक्तों को इच्छा पूरी कहने वाले हैं सो हे औघड़ दानी ! मेरी भी इच्छा पूरी कीजिये।

शंकर जीने कहा—जल्दी कहो,क्या चाहते हो ?

ऊँट बोला-भगवन् ! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो ऐसा वरदान दीजिए कि मेरी गरदन एक योजन लम्बीहो, जिससे मैं एकही स्थानपर बैठा बैठा दूर दूर तक के वृक्षों को चर लिया करूँ, इधर उधर भागने का कष्ट न उठाना पड़े ।

महादेव जी ऊँट पर बहुत झल्लाये--उन्होंने कहा-दुष्ट ! आलस्य का पोषण करने वाला वरदान मांगता है यह तो तेरे नाश का कारण बन जायगा। उचित परिश्रम करके कमाई हुई वस्तुऐं ही सुखदायक होतीहै। शिवजीने बहुत देर समझाया कि ऐसी चीज न मांगनी चाहिए जिससे अपनी श्रम शक्ति कुंठित होती हो। परन्तु ऊंट की समझ में एक न आई । वह उसी प्रकार गरदन झुकाये, नेत्र मूँदे, दांत निकाले, एक पाँवसे महादेव जोके सामने खड़ा रहा। ऊंट की यह दशा देखकर पार्वती जी को बड़ी दया आई उन्होंने अपने पति देवता से कहा—भगवन्— आपकी क्या हानि है। हजारों प्राणियों को आप नित्य ही वरदान देते हैं, एक इसे भी दे दीजिए। आपका क्या बिगड़ जायगा ?

झमेला अधिक बढ़ते देखकर महादेव जी ने 'तथास्तु' कह दिया और आगे चल दिये, ऊँट की छोटी सी गरदन एक योजन लम्बी होगई ।

अब तो चैन की कटनें लगी । ऊँट महाशय अपने चबूतरे पर बैठे रहते। जहां कहीं हरी भरी कोमल सुस्वादिष्ट पत्तियाँ दिखाई पड़ती वहीं गरदन लम्बी कर देते। एक योजन लम्बाई चौड़ाई में से बीन बीन कर उत्तमोत्तम चारा वे खाने लगे। प्रसन्नता के मारे वे फूल कर कुप्पा हो रहे थे।

समय जाते देर नहीं लगती । दिन पर दिन बीतने लगे । मौसम बदला, वर्षा आई । पानी बरसने लगा और बिजली चमकने लगी। ऐसे समय में एक योजन लम्बी गरदन को वर्षा में पड़ी रहने देना बड़ा नष्ट कर मालूम होने लगा। ऊँट ने एक लम्बी गुफा में ज्यों त्यों करके उसे घुसेड़ा और एक संतोष की ठंडी सांस ली।

कुछ ही घड़ियां व्यतीत हुई थीं कि भीगता भागता एक शृगाल भी उसी गुफा में आधसा, वर्षा में भीगता हुआ वह भी भूखा प्यासा आया था। मांस का इतना बड़ा लट्ठा अरक्षित पड़ा देखकर उसे बहुत प्रसन्नता हुई। शृगाल महोदय निर्भयता पूर्वक उसे खाने लगे ।

ऊँट के लिए यह सरल न था कि इतनी लम्बी गरदन को गुफा में से जल्दी से वापिस निकाल लेता। जब तक उसने निकालने की कोशिश की तब तक सियार ने उस पतली गरदन को फाड़ डाला और काट कर दो टुकड़े कर दिये। ऊँट मर गया। सियारको अनायास बहुत दिनोंका भोजन मिलगया।

आलसी और अकर्मण्य पुरुष बिना परिश्रम किए बड़ी सम्पदाऐं चाहते हैं यदि किसी प्रकार वे उन्हें मिल भी जाँय तो अन्त में दुख दायक ही होती हैं।

अमृत की प्राप्ति ।

मनुष्य की सब से प्रिय वस्तु उसका जीवन है। जब जीवन नष्ट होने की घड़ी आती है तो वह उसके बदले में बड़ी से बड़ी वस्तु देने को तैयार हो जाता है। चाहे कोई कैसी भी दीन हीन दशा में क्यों न हो परन्तु यदि मृत्यु का भय उसके सामने उपस्थित हो तो वह उससे बचने का उपाय करता है। कहते हैं कि एक लकड़हारा जङ्गल में लकड़ियां इकट्ठी कर रहा था। उसके शिर में फोड़े थे, शरीर बीमार था गट्ठा भारी था, इतनी लकड़ियाँ उसे दूर के गांव में शिर पर रख कर बेचने के लिए ले जानी थी, बिना इसके गुजारा नहीं था। जब लकड़हारा गट्ठा बांध चुका तो उसने एक लम्बी साँस ली और कहा—अच्छा था कि इस दुख की बजाय मुझे मौत आ जाता। लकड़हारे का इतना कहना था कि झट से मौत उसके सामने आकर खड़ी हो गई और कहने लगी—कहो भाई ! तुमने मुझे क्यों बुलाया है ? जो कहो सो तुम्हारा काम करने को तैयार हूं। मृत्यु को देखकर लकड़हारे के होश उड़ गये। उसने गिड़गिड़ाकर कहा—देवी जी, आप का आवाहान मैंने इसलिए किया है कि लकड़ियों का गट्ठा भारी है। यहां उठवाने वाला कोई है नहीं, इसलिए आप यह कृपा करें कि इस गट्ठे को उठाने में मुझे सहारा लगावें जिससे इसे शिर पर रखकर अपने गांव को चला जाऊँ।" मृत्यु ने उसका गट्ठा उठवा दिया और मन ही मन मुसकराती हुई अन्तर्धान होगई।

यह कथा एक महान् सत्य पर थोड़ा सा प्रकाश डालती है। हर आदमी अपने जीवन से इतना प्यार करता है जितना और किसी वस्तु से नहीं करता। इसीलिए मनुष्य अतीत काल से यह इच्छा करता चला आया है कि मैं अधिक दिन जिऊँ, मृत्यु से बचा रहूं, अमर जीवन का उपभोग करूँ। इस इच्छा ने उससे एक ऐसे पदार्थ की कल्पना कराई है जिसे पीने से अमरता प्राप्त होती है। अमृत, सुधा, आवेहयात आदि अनेक नाम उस पदार्थ के दिये गये हैं। ऐसी कथाऐं और किम्वदन्तियां हर देश में प्रचलित हैं जिनमें किसी अदृश्य देवताओं या महा पुरुषों के अमर होने का वर्णन है। परन्तु प्रत्यक्षतः प्रमाणिक रूप से अभी तक एक भी ऐसा जीव कहीं भी नहीं देखा गया है जो अमर हो। इस संसार की रचना ऐसे परमाणुओं से हुई है जो हर घड़ी चलते, गति करते और परिवर्तित होते हैं। विनाश और विकाश यह दोनों इसी प्रकार आपस में संबंधित हैं जैसे कि रात और दिन। यदि मृत्यु न हो तो नया जीवन भी न होगा। अमरता का अर्थ है—गति हीनता। गति का नाम ही जीवन है। यह जीवन यदि अचल हो जाय तभी उसका नष्ट न होना संभव है। जो वस्तु चलेगी वह घिसेगी, बिगड़ेगी और नष्ट होगी यह आवश्यम्भावी है। इसलिए जिस रूप में मनुष्य जीवन आज है उसमें कोई अमर नहीं हो सकता। राम, कृष्ण, ईसा, बुद्ध, मुहम्मद आदि अनेक योगी, यती, अवतार, देव-दूत इस पृथ्वी पर हुए हैं, परन्तु कोई एक भी अमर न हो सका अन्ततः सब को मृत्यु की शरण लेनी पड़ी। अति प्राचीन काल से मनुष्य अमरता की इच्छा कर रहा है कल्पनाओं, कथाओं की रचना उसने इस दिशा में बहुत कुछ की है परन्तु अभी तक न तो कोई अमर हो सका और न किसी को अमृत ही मिला।

तो क्या 'अमृत' नामक कोई पदार्थ संसार में नहीं है ? हमारा कहना है कि—है और अवश्य है। अत्यंत उग्र आध्यात्म साधनाओं द्वारा हमारे पूजनीय ऋषियों ने उस अमृत की खोजकी है ढूँढा है। और ढूँढकर हमारे सामने उपस्थित कर दिया है। इसे सब कोई सरलता पूर्वक प्राप्त कर सकता है और यह प्रत्यक्ष अनुभव कर सकता है कि—मैं अमर हूँ। अमर होने पर जो संतोष, शान्ति, प्रसन्नता और साहस प्राप्त होने को था वह सब का सब इस ऋषि कल्प-अमृत द्वारा प्राप्त हो सकता है। इस

[?] का दूसरा नाम है—'ब्रह्म ज्ञान'।

ब्रह्म विद्या वह मानसिक शिक्षा है जो [?]र की सीमा से उठाकर मनुष्य को आत्मा [?]ाव में ले जाती है। नश्वरता की सीमा से उठा अमरता की भूमिका में जागृत करती है। ब्रह्म [?]ा—यह सिखाती है कि मनुष्य शरीर नहीं वरन् [?]त्मा है। शरीर के साथ उसकी मृत्यु नहीं होती [?]न् पीछे भी वह अनन्त काल तक जीवित रहता है [?]ा—ब्रह्म विद्या का महा ग्रन्थ है। उसमें मानव [?]णी से कहा गया है कि—'-तुम ऐसा विश्वास करो मैं आत्मा हूं, अमर हूं, अविनाशी हूं, शरीर के [?]ने से मेरी मृत्यु नहीं होती। देह एक प्रकार का [?]ड़ा है जिसे समय समय पर बदलने की आवश्य-[?]ा होती है। जैसे कपड़े को बदलने में दुख शोक [?]ीं किया जाता वैसे ही शरीर बदलने में भी नहीं [?]ना चाहिए।" आत्मा की अमरता के इस सिद्धान्त [?] साधारणतः सभी आदमी कहते और सुनते हैं, [?]न्तु जो कोई गंभीरता पूर्वक इस ओर ध्यान देता और दृढ़ता पूर्वक यह विश्वास कर लेता है कि—[?]मैं वास्तव में आत्मा हूँ वास्तव में अविनाशी हूं" [?] उसके समस्त दृष्टिकोण और कार्यक्रम में एक [?]म आश्चर्य जनक परिवर्तन होजाता है। उसे लगता [?] कि मैं प्रत्यक्षतः अमृत पिये हुए हूं। मरने का, नष्ट [?]ने का, जीवन से हाथ धोने का, उसके सामने [?]भी प्रश्न ही नहीं उठता, कपड़े के पुराने होने या [?]टने से कोई आदमी बेचैन नहीं होता। कपड़ा [?]दलते समय कोई मनुष्य न तो डरता है और न [?]ोता पीटता है। क्यों? इसलिए कि उसका दृढ़ [?]वेश्वास है कि कपड़ा एक मामूली वस्तु है, यह [?]फटती और बदलती जाती रहती है, कपड़ा फटने या [?]दलने से शरीर का कुछ अनिष्ट नहीं होता वरन [?]ुराने की अपेक्षा नया मजबूत और सुन्दर कपड़ा मिल जाता है। शरीर और कपड़े बदलने के सिद्धान्त [?]ो जिस भली प्रकार पूर्ण विश्वास के साथ मनुष्य अपना लिया है यदि वह ठीक उसी प्रकार उतनी ही दृढ़ता, निष्ठा, और गम्भीरता के साथ मन में जमाले तो निश्चय समझिये उसकी मनोभूमि ठीक वैसी ही हो जायगी जैसी वास्तविक अमृत पीने वाले की हो सकती है। मृत्यु का डर जो कि मानव जीवन में सबसे बड़ा डर है, ब्रह्म विद्या के द्वारा आध्यात्म निष्ठा द्वारा मिट सकता है। और कोई उपाय ऐसा नहीं है जो इस कलेजे में कांटे की तरह सदा चुभते रहने वाले भय से छुटकारा दिला सके।

ब्रह्म विद्या—अमर आत्मा का विश्वास सचमुच भूलोक का अमृत है। इसे पान करने के उपरान्त मनुष्य की दिव्य दृष्टि खुलती है। वह कल्पना करता है कि मैं अतीत काल से, सृष्टि के आरंभ से, एक अविचल जीवन जीता चला आ रहा हूं। अब तक लाखों करोड़ों शरीर बदल चुका हूं। पशु, पक्षी, कीड़े, मकोड़े, जलचर, थलचर, नभचरों के लाखों मृत शरीरों की कल्पना करता है और अन्तर्दृष्टि से देखता है कि ये-इतने-शरीर समूह मेरे द्वारा पिछले जन्मों में काम में लाये एवं त्यागे जा चुके हैं। उसकी कल्पना भविष्य की ओर भी दौड़ती है अनेक नवीन, सुन्दर, ताजे, शक्ति सम्पन्न शरीर सुसज्जित रूप से सुरक्षित रखे हुए उसे दिखाई पड़ते हैं जो निकट भविष्य में उसे पहनने हैं। यह कल्पना—यह धारणा—ब्रह्मविद्या के विद्यार्थी के मानस लोक में सदैव उठती, फैलती और पुष्ट होती रहती है। यह विचार धारा धीरे धीरे—निष्ठा और श्रद्धा का रूप धारण करती जाती है, जब पूर्ण रूप से, समस्त [?]द्धा के साथ साधक यह विश्वास करता है कि यह वर्तमान जीवन—मेरे महान् अनन्त जीवन का एक छोटा सा परमाणु मात्र है तो उसके समस्त मृत्यु जन्य शोक की समाप्ति हो जाती है। उसे बिलकुल ठीक वही आनन्द उपलब्ध होता है जो किसी अमृत का घट पीने वाले को होना चाहिए।

जिस सुरलोक के अमृत की कल्पना की गई है उसका आरम्भिक छोर कुछ आकर्षक मालूम होता है परन्तु अन्तिम छोर बहुत ही रूखा और कर्कश

है। मुसलमानी धर्म ग्रन्थों में एक कथा है कि—ख्वाजा खिजर की कृपा से सिकन्दर आवेहयात (अमृत) के चश्मे तक पहुंचा। सिकन्दर उस अमृत को पीने को ही था कि पास में बैठे हुए एक कौए ने चिल्लाकर कहा—ऐ बदनसीब ! खुदा के लिए इस पानी को न पीना। सिकन्दर ने हैरान होकर पूछा—क्यों ? कौए ने उत्तर दिया—मैंने एक बार बदनसीबी से इस पानी की एक बूँद पी ली। अब मैं बुड्ढा और कमजोर हूं। साथी सङ्गी सब मर गये पर मैं अकेला उनकी याद करता हुआ रात दिन बैठा बैठा रोया करता हूं। अकेला भटकता हूं, नये पैदा होने वाले बच्चों के उल्लास को देख देखकर मन मसोस कर रह जाता हूं। जीने से मेरा दिल भर गया है, पर प्राण नहीं निकलते। सो ऐ बादशाह ! अगर तुम भी इस पानी को पी लोगे तो तुम्हारा भी यही हाल होगा। सिकन्दर कुछ देर स्तब्ध खड़ा हुआ कौए की बातों पर गौर करता रहा और आवेहयात (अमृत) को बिना पिये ही उलटे पांवों वापिस लौट आया।

यदि मनुष्य शरीर से अमर हो भी जाय तो यह बात उसके लिए अन्ततः दुख का कारण ही बनेगी। वह अमरता—जो मनुष्य को संतोष और शान्ति प्रदान करने की क्षमता रखती है—आध्यात्मिक अमरता ही है। ब्रह्मज्ञान का अमृत ऐसा अनुपम है जिसके आगे देवताओं वाला अमृत अत्यन्त तुच्छ है। ब्रह्म विद्या से मनुष्य को निर्भयता, स्वतंत्रता, प्रसन्नता एवं प्रफुल्लता प्राप्त होती है। जीवन के दृष्टिकोण में एक ब्रह्म तेज भर जाता है, वह शारीरिक भोगों को भौतिक वस्तुओं के परिग्रह को महत्व नहीं देता बरन् आत्मा को ऊँचा उठाने वाले, जीवन को सरस, निर्मल एवं पवित्र बनाने वाले, हृदय को सन्तोष देने वाले कार्यों को महत्व देता है। उच्च, सात्विक और परमार्थिक कार्यों में उसकी रुचि होती है, उन्हीं में मन लगता है और उन्हीं में उसे रस आता है। ऐसे शुभ विचार और शुभ कर्म करने वाले मनुष्य को इसी जीवन में स्वर्ग है क्यों कि उसकी हर एक क्रिया स्वर्गीय होती है।

अमृत पीकर अमर होने वाले मनुष्य की चिन्ताऐं और तृष्णाऐं अधिक बढ़ेगी क्योंकि जब सौ पचास वर्ष के जीवन के लिए मनुष्य इतने इतने सरंजाम इकट्ठे करता है तो अमर जीवन के लिए वह असंख्य गुने सरंजाम जोड़ने और जमा करने की फिक्रें करेगा, और वे फिक्रें ही उसे खाने लगेंगी। इसके विपरीत ब्रह्म ज्ञान का अमृत समस्त चिन्ता और तृष्णाओं को समाप्त कर देता है। मृत्यु और जीवन को वह एक ही जुए में जोत देता है दोनों का यह जोड़ा कितना भला मालूम पड़ता है ? मृत्यु और जीवन को जो समान दृष्टि से देखता है वह धन्य है। शोक, मोह, चिन्ता, क्लेश, पश्चात्ताप, तृष्णा, पाप, आदि की छाया भी ऐसे मनुष्यों तक नहीं पहुंच पाती। ब्रह्म ज्ञान का अमृत पीकर तृप्त हुए स्थिति प्रज्ञ ही वास्तव में अमर है, आध्यात्म ज्ञान की वह धारा जो आत्मा की अमरता का पाठ पढ़ाती हुई. जीवन को उच्च एवं उत्तम बनाने की प्रेरणा करती है वास्तव में वही अमृत की निर्झरिणी है। पाठको ! इस सुधा धारा को पान करो और अमृतत्व का आस्वादन करो।

कृतज्ञता ज्ञापन।

अखण्ड ज्योति के प्रिय पाठकों में अनेकों ने हमारी धर्मपत्नी की मृत्यु का समाचार सुनकर हमें सान्त्वना देने वाले सहानुभूति सूचक उद्गार भेजे हैं। इन संदेशों से हमें बहुत बल मिला है। इसी प्रकार ६ दिसम्बर को हमारी ३२ वीं जन्म गांठ के उपलक्ष में अनेकों बधाइयां आई हैं। हमारे प्रति इस प्रकार की आत्मीयता प्रकट करने वाले अपने मित्रों के हम हृदय से कृतज्ञ हैं। करीब १६०० इस प्रकार के पत्र आये हैं जिनका प्रथक् प्रथक् उत्तर दिया जाना कठिन देखकर इन पंक्तियों द्वारा हम उन महानुभावों के प्रति आभार प्रदर्शित करते हैं। —श्रीराम शर्मा

मर्त्यलोक का कल्पवृक्ष ।

सुर लोक में एक कल्पवृक्ष है। इस कल्पवृक्ष में ऐसा गुण है कि उसके नीचे बैठकर जैसी कुछ इच्छा की जाय वह पूरी हो जाती है। जैसे कोई आदमी उस वृक्ष के नीचे इच्छा करे कि मुझे एक सहस्र अशर्फी मिल जांय तो उसे अशर्फियाँ मिल जांयगी। कोई दूसरी वस्तु चाहे तो वह भी उसे प्राप्त होगी। ऐसे कल्पवृक्ष की मानव जाति बहुत दिनों से इच्छा करती चली आ रही है। जिस दिन से इस बात का पता चला कि इस विश्व में कल्पवृक्ष का आस्तित्व है उसी दिन से मर्त्यलोक के निवासी उसका पता लगाने और प्राप्त करने की कोशिस करने लगे। कारण यह है कि हर एक इच्छा को पूरा करने की, हर एक मनचाही वस्तु को देने की शक्ति जिस में है ऐसे बहुमूल्य पदार्थ की आकांक्षा भला कौन न करेगा? सुख प्राप्त करने के लिए समस्त विश्व लालायित है जिस कल्पवृक्ष के द्वारा सुख की इच्छा आसानी से पूरी हो सकती है उसे चाहना उसकी उत्कट अभिलाषा करना स्वाभाविक है। कल्पवृक्ष की खोज करते हुए मनुष्य जाति को लाखों करोड़ों वर्ष बीत गये, परन्तु अभी तक वह उस रूप में कहीं भी नहीं पाया जा सकता जैसा कि सुरलोक वाले कल्पवृक्ष के बारे में पुराणों में बताया गया है।

आध्यात्म विद्या के वैज्ञानिकों ने उस कल्पवृक्ष को ढूँढ निकाला है और प्रमाणित कर दिया है कि वह सर्व सुलभ है। उसे जो चाहे सो आसानी से पा सकता है। सुरलोक की वस्तुऐं जब मर्त्य लोक में आती है तो उनका रूप कुछ ऐसा हो जाता है कि हमारी आँखों से दिखाई नहीं पड़तीं या यों कहिये कि स्वर्ग लोक की चीजों को हमारे चर्म चक्षु ठीक उसी रूप से नहीं देख पाते। देवता लोग अपने लोक में शरीर सहित रहते होंगे किन्तु मर्त्यलोक में कोई देवता शरीर सहित विचरण करता हुआ नहीं देखा गया। देवता लोग मर्त्यलोक में आते जाते हैं परंतु वे आंखों से दिखाई नहीं पड़ते। इसी प्रकार कल्पवृक्ष हमारी दुनियां में है तो सही परन्तु उसे आँखों से नहीं देखा जा सकता। परन्तु वह अदृश्य होते हुए भी अपने सम्पूर्ण गुणों से युक्त है, जो कार्य उस के द्वारा सुरलोक में होता है वही सब कार्य इस लोक में भी हो सकता है। अदृश्य होने के कारण उसकी शक्ल देखने से हम जरूर वंचित रहते हैं परन्तु उसके द्वारा प्राप्त होने वाले लाभों को उसी प्रकार पा सकते हैं जैसे कि देवता लोग पाते हैं।

मर्त्यलोक का कल्पवृक्ष है—'तप'। तप का अर्थ है कष्ट सहन करना, परिश्रम एवं प्रयत्न करना। प्राचीन काल में अनेक व्यक्तियों ने तप करके वरदान प्राप्त किये थे। उन वरदानों के बल से वे तपस्वी लोग बड़ी बड़ी चमत्कारी सिद्धियाँ प्राप्त कर चुके थे। पौराणिक कथाओं से प्रतीत होता है कि देवताओं का प्रसन्न करने का एक मात्र उपाय तप था। तपस्वी लोगों से ही वे सन्तुष्ट होते थे। क्योंकि ऐश्वर्य को भोगने का अधिकारी केवल तपस्वी–परिश्रमी ही है। खीर और मोहनभोग वही पचा सकता है जिसकी जठराग्नि प्रदीप्त हो, मन्दाग्नि वाले को गरिष्ठ भोजन देना तो मानो उसके मारने का प्रबन्ध करना है। कहते हैं कि सिंहिनी का दूध स्वर्ण के पात्र में दुहा जाता है, दूसरे पात्र में इतनी शक्ति नहीं होती कि उसमें वह दूध रह सके। इसी प्रकार जो तपस्वी नहीं है उसमें ऐश्वर्य को धारण करने की क्षमता नहीं होती। ऐसे अयोग्य आदमियों को यदि कुछ मिल जाय तो वे उसे पाकर करीब करीब पागल हो जाते हैं। बच्चों के हाथ में बन्दूक और बारूद पड़ जाय तो वे खेल खेल में ही अपना या दूसरों का भयङ्कर अनिष्ट करलें। अतएव परमात्मा ने यह सुनिश्चित नियम बना दिया है कि सम्पदाऐं उन्हीं के पास रहें जो उन्हें रखने के अधिकारी हैं। अधिकारी होने की सब से प्रधान कसौटी यह है कि उसमें पुरुषार्थ है या नहीं?

इच्छित वस्तु को प्राप्त करने योग्य प्रयत्नमयी उत्कट अभिलाषा रखता है नहीं ? देवता लोग जब इस बात की परख कर लेते हैं तो इसे वस्तु खुशी खुशी दे देते हैं जिसका वह अधिकारी है।

भागीरथजी तप करके गङ्गा को मर्त्यलोक में लाये, पार्वतीजी ने तप करके शिव को वर रूप में पाया, ध्रुव ने तप करके अचल राज्य पाया, एक नहीं अनेकानेक प्रमाण इस बात के मौजूद हैं कि तप से ही सम्पदा मिलती है। मनोवांछाऐं पूर्ण करने का एक मात्र साधन तप ही है—परिश्रम एवं प्रयत्न ही है। क्या देव क्या असुर जिसने भी ऐश्वर्य पाया है, वरदान उपलब्ध किये हैं तप के द्वारा पाये हैं। अनन्त सम्पदाओं के ढेर अपने चारों ओर बिखरा पड़ा हो तो भी कोई उसे तप बिना नहीं पा सकता। समुद्र के अन्दर अतीत काल से अनेक रत्न छिपे पड़े थे। उनके अस्तित्व किसी पर प्रकट न था किन्तु जब देवता और असुरों ने मिलकर समुद्र मन्थन किया तो उसमें से चौदह अमूल्य रत्न निकले। यदि मन्थन न किया जाता तो चौदह क्या चौथाई रत्न भी किसी को न मिलता। प्रयत्न परिश्रम और कष्ट सहन करने से ही किसी ने कुछ प्राप्त किया है। अकस्मात् छप्पर फाड़कर मिल जाने के कुछ अपवाद कहीं कहीं देखे और सुने जाते हैं परन्तु यह इतने कम होते हैं कि उन्हें सिद्धान्त रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता। पूर्व जन्मों का संचित पुण्य एक दम कहीं प्रकट होकर कुछ सम्पदा अकस्मात उपस्थित करदे ऐसा होना असम्भव नहीं है, कभी कभी ऐसा हो भी जाता है कि किन्हीं व्यक्तियों को बिना परिश्रम के भी कुछ चीज मिल जाती है परन्तु इसे भी मुफ्त का माल नहीं कहा जा सकता। पूर्व सञ्चित पुण्य भी परिश्रम और कष्ट सहन द्वारा ही प्राप्त हुए थे। इन भाग्य से अकस्मात् प्राप्त होने वाले लाभों में भी प्रत्यक्ष रूप से परिश्रम ही मुख्य होता है।

परमात्मा की इस सुव्यवस्थित रचना में सब कार्य नियमित रूप से व्यवस्था पूर्वक होरहे हैं इसमें 'पो पो माई' का राज नहीं है जहां से हर कोई लूट का मूमल उठा ले जावे। यहाँ अनियमित रूप से किसी को एक कण भी नहीं मिलता। कबीर की एक अनुभव पूर्ण वाणी है कि—

राम झरोखे बैठकर सबको मुजरा लेय।
जैसी जाकी चाकरी तैसो ताको देय॥

झरोखे में बैठे हुए राम, सब की जाँच पड़ताल करते हैं, जिनका जितना परिश्रम है उसको उतना ही देते हैं। संसार के बाजार में "इस हाथ दे उस हाथ ले" की नीति चल रही है। जो जितना देता है वह उतना पाता है। उद्योगी पुरुष सिंहों को लक्ष्मी प्राप्त होती है और निखट्टू पुरुष दैव दैव—भाग्य भाग्य—बकते झकते हुए हाथ मलते रहते हैं।

तप करने से, एक निष्ठा के साथ विवेक पूर्ण प्रयत्न करने से, बड़े बड़े दुर्लभ पदार्थ प्राप्त होते हैं। फावड़े के बल से वीर फरिहाद ने पहाड़ तोड़कर एक लम्बी नहर खोद निकाली। कालिदास ने भरी जवानी में ओलम बारखड़ी सीखना शुरू किया और भारत के चमकते हुए साहित्यक सितारे कुछ ही दिनों में बन गये। एक नहीं असंख्य उदाहरणों को हम अपने आस पास फैला हुआ देख सकते हैं। तपाने से सोना चमकता है, मांजने से धातुऐं निखरती है, घिसने से हथियार तेज होता है. रगड़ने से आग पैदा होती है। परिश्रम और प्रयत्न से मनुष्य के भीतर छिपी हुई अनेकानेक शक्तियां और योग्यताऐं प्रस्फुटित होती हैं फिर उनके द्वारा वह सब सम्पदाऐं प्राप्त हो जाती हैं जो कि कल्पवृक्ष द्वारा प्राप्त होनी चाहिए।

यदि अपने घर कपड़े शरीर आदि को सुन्दर देखना चाहते हैं तो उनको सफाई में जुट जाइए धूलि में मिलकर मकान को लीप पोत डालिए, कपड़ों को धुलाइ कर डालिये, टूट फूट को ठीक कीजिये, सजावट में परिश्रम कीजिये, बस आपकी चीजें स्वच्छ, सुन्दर और आकर्षक बन जावेंगी। शारी-

िक स्वास्थ्य को अच्छा बनाना चाहते हैं तो व्यायाम-मालिश आत्म संयम आदि के लिये मेहनत कीजिए थोड़े ही दिनों में शरीर बलवान होने लगेगा। ज्ञान, पैसा, कीर्ति नेतृत्व, मनोबल, स्वर्ग, मुक्ति, सुख शान्ति जो कुछ भी आप चाहते हैं उसके लिये तप कीजिये कठिन प्रयत्न, एकनिष्ठा पूर्ण प्रयत्न, अटूट प्रयत्न !! सफलता का मूल मंत्र है। आजके कष्टों को भविष्य की स्वर्णिम आशा पर निछावर कर देना तप है। यह तप प्रत्यक्ष फलदायक है। सिद्धियाँ तपस्या की चेरी हैं। पुरुषार्थी के गले में विजय माला पड़ने का ईश्वरीय सुनिश्चित विधान है उस को कोई नहीं पलट सकता, कोई नहीं बदल सकता। प्रयत्न करने वाले को आज नहीं तो कल मनोवांछित वस्तु मिलकर रहेगी। जो अपना मदद आप करता है परमात्मा उसकी मदद जरूर करता है।

मुफ्त में मन चाहा माल लूटने की सुविधा देने वाला यदि कोई कल्पवृक्ष होता भी हो तो वह सर्व साधारण के लिये कुछ लाभदायक न होगा वरन् हानिकर ही सिद्ध होगा। क्योंकि लूट के माल में मनुष्य की बुद्धि अव्यवस्थित हो जाती है। नाना प्रकार के उचित अनुचित अनियंत्रित सङ्कल्पों का ऐसा जमघट मनमें जमा होने लगता है जिसका परिणाम सर्वनाश जैसा निकलता है। कहते हैं कि एक बार कोई आदमी कल्पवृक्ष के पास पहुंच गया। उसने इच्छा की कि शीतल जल पीने को होता तो बड़ा अच्छा था। इच्छा करने की देर थी कि ठण्डा जल सामने हाजिर होगया। अब उसने स्वादिष्ट भोजन चाहे, वह भी हाजिर। इसी प्रकार उसने क्रमशः पलङ्ग, बिस्तर, दास, दासी, महल, खजाने, राजपाट, मांगे वह सब भी मिले। अब जब कि सम्पत्तियों की ओर से मन भर गया तो उसका चित्त दूसरी ओर को चला, उसे भय लगा कि कहीं कोई हिंसक जन्तु न आ जाय, सोचने की देर थी दहाड़ते हुए सिंह देवता सामने आ खड़े हुए। अब वह भय के मारे काँपने लगा और मन ही मन ऐसा डरने लगा मानों यह सिंह अभी मुझे खाये जा रहा है। यह विचार आया ही था कि सिंह ने उसे धर दबोचा और अपने पेट में पहुँचा दिया। बिना उचित परिश्रम और योग्यता के कुछ मिलने का विधान न्यायकारी परमात्मा ने अपने सुव्यवस्थित सृष्टि में नहीं रखा है। यदि किसी को किसी प्रकार ऐसा कुछ मिल भी जाय तो वह उसके पास ठहरता नहीं वरन् असह्य पीड़ाऐं देता हुआ वह सब वैसे ही चला जाता है जैसा कि आया था।

भूलोक का कल्पवृक्ष—तप है। उत्साह, स्फूर्ति, लगन, धुन, परिश्रम प्रियता, साहस, धैर्य दृढ़ता और कठिनाई को देखकर विचलित न होना यह तप के लक्षण हैं। जिसने तप द्वारा इन गुणों को पैदा किया, अपने मनोवांछित तत्व को पाने के लिये खून पसीना बहाना सीखा, वह एक प्रकार का सिद्ध है। कल्पवृक्ष की सिद्धि उसके आगे हाथ बांधे खड़ी रहती है। ऐसे आदमी जो चाहते हैं कर गुजरते हैं जो चाहते हैं प्राप्त कर लेते हैं। नेतृत्व, लोक सेवा, धन उपार्जन, प्रतिष्ठा, ज्ञान, भोग आदि सम्पदाऐं पाने की जिनके मनमें लालसाऐं उठती हों उन्हें सबसे पहले अपने को तपस्वी बनाना चाहिए। आलस्य, प्रमाद, समय का अपव्यय, बकवाद, ठलुआपंथी, निराशा, निरुत्साह, अस्थिरता आदि दुर्गुणों को हटाकर तपश्चर्या के सद्गुणों को अपने अन्दर धारण करना चाहिए। यह प्रगति जिस क्रम के साथ होती है उसी क्रम से सम्पदाओं और वैभवों का समूह सामने उपस्थित होता है।

याद रखिये तप ही कल्पवृक्ष है। जिस किसी ने उस दुनियाँ में कुछ पाया है परिश्रम से पाया है। आप भी कुछ पाना चाहते हैं तो अदम्य उत्साह के साथ घोर परिश्रम करना अपना स्वभाव बनाइये। इस साधना के फल स्वरूप आपको कल्पवृक्ष जैसी प्रतिभा मिलेगी और उसके द्वारा आपकी सब प्रकार की इच्छा आकांक्षाऐं आसानी से पूरी हो जाया करेंगी

———

कलम से काँसे को थाली के भीतरी भाग में १०१ बार गायत्री मन्त्र लिखकर गर्भवती को पिलाने से तेजस्वी पुत्र उत्पन्न होता है। (७) चांदी के पात्र में पांच तोले ताजा कुए का जल लेकर प्रातःकाल सूर्य के सन्मुख खड़े होकर १०१ बार गायत्री का जप करके पिलाने से स्त्री पुरुषों के रज तथा वीर्य के दोष दूर होते हैं (८) रविवार को मध्यान्ह काल में सूर्य के संमुख खड़े होकर गायत्री की पाँच माला जपने से शत्रुओं के दुष्प्रयत्न निष्फल हो जाते हैं (९) गायत्री जपते हुए शयन करने से अच्छी नींद आती है और दुःस्वप्न नहीं होते (१०) सिन्दूर और घृत मिलाकर व्यापार के स्थान या भण्डार गृह में गायत्री लिख देने से लक्ष्मीजी का निवास होता है अच्छा लाभ रहता है।

इस प्रकार एक नहीं अनेकों लाभ हैं जो साधक को स्वय अनुभव में आने लगते हैं। जिस कार्य में भी गायत्री माता की सहायता लेकर हाथ डाला जाता है उसमें विजय ही मिलती है। गायत्री की महिमा अपार है वह कहने सुनने और लिखने बाँचने की नहीं वरन् स्वयं अनुभव करने की बातहै।

परोपकार करना, दूसरों की सेवा करना और उसमें जरा भी अहङ्कार न करना, यही सच्ची शिक्षा है।

× × × ×

जिन्दगी उसी की बड़ी होती है, जो अपने समय का अच्छा उपयोग करता है। जो समय को नष्ट करता है, उसकी जिन्दगी बड़ी होने पर भी बहुत छोटी समझी जाती है। कर्ममय जीवन ही दीर्घ जीवन है और आलस्यमय जीवन ही मृत्यु है।

× × × ×

विपत्ति में धैर्य, अभ्युदय में क्षमा. सभा में वाक् चातुर्य. युद्ध में विक्रम, यश में रुचि और श्रुति में व्यसन. ये महात्माओं के स्वभाव सिद्ध गुण हैं।

× × × ×

विजयी ही पूजे जाते हैं!

(विद्या भूषण पं० मोहन शर्मा विशारद
पू० संपा० मोहिनी)

सिद्ध पुरुष का—सफलता प्राप्त मनुष्य का जीवन आदर्श जीवन माना जाता है। जो असफल हुआ अपने निर्दिष्ट स्थान तक न पहुंच सका उसे उपहास और पश्चात्ताप का भागी बनना पड़ता है। इस दुनियां में उसी की बन्दना होती है, जिसने सफलता प्राप्त की है। लोग उसकी प्रशंसा करते करते नहीं थकते। कारण यह है कि जिसने स्वयं सफलता प्राप्त की है लोग उसी से ऐसी आशा करते हैं कि यह हमें भी सफलता के मार्ग पर अग्रसर कर सकेगा। जो स्वयं परास्त हुआ है, हार गया है, असफल रहा है उसके निकट संपर्क में आते हुए लोग डरते हैं वे सोचते हैं कि कहीं ऐसा न हो कि इस व्यक्ति के संसर्ग के कारण हमें भी असफलता, पराजय प्राप्त हो।

संसार में जितने भी महा पुरुष और प्रसिद्ध व्यक्ति हुए हैं, उनके जीवन पर जरा गहरी दृष्टि डालिये। आप देखेंगे कि उनकी सफलताऐं ही उन्हें इतना ऊँचा उठाने में, प्रख्यात बनाने में प्रधान रूप से सहायक हुई। एक छोटे से काम में छोटीसी सफलता प्राप्त कर लेने पर भी आदमी का हौसला बढ़ता है, उसकी हिम्मत चौगुनी हो जाती है। लोगों का ध्यान उस सफलता की ओर खिंचता है, वे उस के प्रशंसक, सहायक और मित्र बन जाते हैं। विजयी मनुष्य को दूसरों का अयाचित और आशातीत सहयोग मिलता है फल स्वरूप वह द्रुति गति से सफलता के पथ पर बढ़ता जाता है, मोर्चे पर मोर्चा फतह करता जाता है और अन्त में महापुरुष कहलाता है। इसके विपरीत पराजित, असफल मनुष्य के मित्र भी साथ छोड़ जाते हैं, हौसला परस्त होजाने के कारण हाथ पैर फूल जाते हैं और क्रमशः अवनति की ओर बढ़ता हुआ अन्त में वह अन्धकार के गर्त में गिर पड़ता है।

साम्य भाव से सिद्धि।

(पं० तुलसीरामजी शास्त्री, वृन्दावन)

समता—सब प्राणियों में आत्मीयता का, बराबरी का, भाव रखना अति उत्तम आध्यात्मिक गुण है। साम्य भाव मनुषोचित आवश्यक तत्व है इसे व्यक्तिगत जीवन में नित्य काम में लाना चाहिए। सामाजिक तथा आर्थिक क्षेत्र में भी समता की प्रणाली का प्रसार करना चाहिये। नीचे पद्मपुराण के कुछ श्लोक दिये जाते हैं। तुलाधार को असाधारण सिद्धियों को देखकर नरोत्तम ने ब्राह्मण धारी भगवान से पूछा था कि इसके पास इतनी सिद्धियां होने का क्या कारण है? भगवान ने उसे बताया कि समता समस्त सिद्धियों की जननी है। तुलाधार साम्य भावी है इसीलिये उसे इतनी सिद्धियां प्राप्त हैं।

सत्येन सम भावेन जितं तेन जगत्त्रयम्।
तेनातृप्यन्त पितरो देवा मुनि गणैः सह ॥
भूत भव्य प्रवृत्तं च तेन जानाति धार्मिकः।
नास्ति सत्यात्परो धर्मो नानृतात्पातकं परम् ॥
विशेषे सम भावस्य पुरुषस्यानघस्य च।
अरि मित्रेप्युदासीने मनोयस्य समं व्रजेत् ॥
सर्व पाप क्षयस्तस्य विष्णु सायुज्यतां व्रजेत।
समोधर्मः समः स्वर्गः समं हि परमं तपः ॥
यस्यैव मानसे नित्यं समः स पुरुषोत्तमः।
विशेषे सर्व लोकेषु समो योगिष्वलोलुपः ॥
एवंयो वर्तते नित्यं कुल कोटि समुद्धरेत्।
सत्यं दमः शमश्चैव धैर्यंस्थैर्यमलोभता ॥
अनाश्चर्यमनालस्यं तस्मिन् सर्वं प्रतिष्ठितम्।
तेनवै देव लोकस्य नर लोकस्य सर्वशः ॥
जानाति धर्मज्ञस्तस्य देहे स्थितो हरिः।
नेह तस्य समोनास्ति समः सत्यार्जवेषु च ॥

पद्मपुराण सृष्टि खंड अध्याय ४७

अर्थात् ! उस धर्मात्मा तुलाधार ने सत्य और समता से तीनों लोकों को जीत लिया है। इसी से उसके ऊपर पितर देवता और मुनि सब प्रसन्न रहते हैं। इन्हीं गुणों के कारण वह भूत और भविष्यत की सब बातें जानता है। सत्य से बढ़कर कोई धर्म और असत्य से बढ़कर कोई पाप नहीं है। जो पुरुष पाप से रहित और समभाव में स्थिर है, जिसका चित्त शत्रु मित्र और उदासीन के प्रति समान है उसके सब पापों का नाश होजाता है और वह विष्णु भगवान् के सामुज्य को प्राप्त होता है। समता धर्म और समता ही उत्कृष्ट तपस्या है। जिसके हृदय में सदा समता विराजती है वही पुरुष सम्पूर्ण लोकों में श्रेष्ठ, योगियों में गणना करने योग्य और निर्लोभ होता है। जो सदा इसी प्रकार समता पूर्ण बर्ताव करता है वह अपनी अनेकों पीढ़ियों का उद्धार कर देता है। उस पुरुष में सत्य, इन्द्रिय संयम, मनोनिग्रह धीरता, स्थिरता, निर्लोभता और आलस्य हीनता ये सभी गुण प्रतिष्ठित होते हैं। समता के प्रभाव से धर्मज्ञ पुरुष देवलोक और मनुष्य लोक के सम्पूर्ण वृत्तान्तों को जान लेता है। उसकी देह के भीतर साक्षात् श्री विष्णु भगवान् विराजमान रहते हैं। सत्य और सरलता आदि गुणों में उसकी समानता करने वाला इस संसार में दूसरा कोई नहीं होता। वह साक्षात् धर्म का स्वरूप होता है और वही इस जगत् को धारण करता है।

जो कर्त्तव्य-परायण हैं, जिनमें कर्त्तव्य-शक्ति है, वे किसी दूसरे का मुँह नहीं ताकते। वे अवसर नहीं ढूँढते, सिर्फ अवस्था देखते हैं और जैसी स्थिति रहती है उसी की गुरुता के अनुसार वे व्यवस्था करते हैं।

\+ \+ \+ \+

आत्म-सम्मान की रक्षा हमारा सबसे पहला धर्म है। आत्मा की हत्या करके अगर स्वर्ग भी मिले तो वह नरक है।

\+ \+ \+ \+

अष्ट सिद्धि नव निद्धि

(ब्रह्म विद्या का रहस्योद्घाटन)

हवा में उड़ जाना, पानी में चलना, शरीर को अदृश्य या छोटा बड़ा बना लेना, इस प्रकार की सिद्धियों का वर्णन किन्हीं २ पुस्तकों में मिलता है पर आज उनका परिचय नहीं मिलता। हम ऐसे सिद्धों की तलाश में दुरुह बन पर्वतों में मुद्दतों तक भ्रमण करते रहे हैं, भारतवर्ष के कौने कौने की खाक छानी है, अनेक गुप्त-प्रकट, अज्ञात, बहु विख्यात, योगियों से हम घनिष्टता पूर्वक मिले हैं और उनकी तह तक पहुंचने का शक्ति भर प्रयत्न किया है, २० वर्षों की निरन्तर खोज में किम्बदन्तियां तो अनेक सुनीं पर ऐसे किसी सिद्ध पुरुष का साक्षात् न हो पाया, जो सचमुच उपरोक्त प्रकार की हवा में उड़ने आदि की सिद्धियों से युक्त हो। जैसे गृहस्थ बाजीगर अपनी चतुरता हस्तकौशल, कूट क्रिया द्वारा आश्चर्य जनक करतब दिखाते हैं वैसे ही चमत्कार दिखाते हुए हमने बहु विख्यात सिद्धों को पाया है। बहुत काल तक उनको लंगोटी धोकर जब उनकी घनिष्टता प्राप्त की तो जाना कि असल में सच्ची सिद्धि उनके पास कुछ भी नहीं है. कूट क्रियाओं द्वारा लोगों को अपने चङ्गुल में फँसा लेने मात्र की कला में वे प्रवीण हैं। ऐसी दशा में इस सम्बन्ध में पाठकों से निश्चित रूप से हम कुछ कह नहीं सकते। यह पंक्तियाँ हमने निजी अनुभव के आधार पर लिख रहे हैं, जिस बात का हम स्वयं अनुभव न करलें उसके सम्बन्ध में पाठकों को कुछ विश्वास करने के लिए हम नहीं कह सकते। संभव है किसी पुस्तक में अतिशयोक्ति के साथ ऐसी सिद्धियों का होना लिख दिया हो, संभव है कोई स्वतन्त्र विज्ञान उन सिद्धियों को प्राप्त करने का रहा हो जो अब लुप्त हो गया हो, संभव है ऐसी सिद्धियों वाले कहीं कोई अप्रकट योगी छिपे पड़े हों और संसार अभी तक उन्हें जान न सका हो। अज्ञात और अप्रत्यक्ष बातों के सम्बन्ध में चाहे जैसे अनुमान लगाये जा सकते हैं, पर जब तक कुछ प्रत्यक्ष अनुभव न हो निश्चित रूप से कहना संभव नहीं। इसलिये पातञ्जलि योग दर्शन में जिन सिद्धियों का वर्णन है, उनके बारे में हम अपना कुछ निश्चित मत पाठकों के सामने प्रकट नहीं कर सकते।

आत्मिक बल बढ़ने से कई प्रकार की शक्तियां प्राप्त होती हैं जिनका हर कोई प्रत्यक्ष अनुभव कर सकता है। १—जिसकी दिलचस्पी आत्मिक क्षेत्र में होती है वह आत्मा को शरीर से भिन्न समझता है और सांसारिक पदार्थों की नश्वरता को भली भांति समझता है. इसलिये थोड़ी वस्तुऐं प्राप्त होने पर भी बिना कुड़कुड़ाये काम चला लेता है और वियोग, हानि, नाश आदि के कारण दुखी नहीं होता तीन चौथाई दुख मानसिक होता है, इनसे उसे सहज ही छुटकारा मिल जाता है। लोग दुःख निवारण के लिये सारा जीवन खपा देते हैं फिर भी सन्तोष की स्थिति प्राप्त नहीं होती किन्तु आत्म ज्ञान से अनायास हो उसकी प्राप्ति हो जाती है यह पहली सिद्धि है। २—आत्म भाव, प्रेम सद्भाव ईमानदारी, सेवा, सहायता की बुद्धि जागृत होने से अपना व्यवहार दूसरों के साथ बहुत ही उदार, विनम्र और मधुर होने लगता है फल स्वरूप दूसरों का व्यवहार भी अपने साथ वैसा हो मधुर-सहायता पूर्ण एवं सरस होता है। मित्रों प्रेमियों, हितचिन्तकों और प्रशंसकों की संख्या बढ़ने से मन प्रसन्नता और प्रफुल्लता से भरा रहता है यह दूसरी सिद्धि है। ३—आत्म निरीक्षण द्वारा कुवृत्तियों को पहचान कर उनसे बचने का प्रयत्न करते रहने से मानसिक शान्ति बनी रहती है, पापों की बढ़ोत्तरी नहीं होती चित्त की शुद्धि होने से अन्तःकरण हलका होता रहता है और नाना प्रकार के मानसिक विक्षेप उठकर घबराहट बेचैनी उत्पन्न नहीं करते यह तीसरी सिद्धि है। ४—चित्त की स्थिरता का शरीर पर भारी प्रभाव पड़ता है इन्द्रिय संयम और शान्त मस्तिष्क के कारण शरीर निरो-

ौर दीर्घजीवी रहता है यह चौथी सिद्धि है। (५) ात्विक वृत्तियों के बढ़ने से धैर्य, साहस, स्थिरता, ढ़ता, परिश्रम-शीलता की वृद्धि होती है, इनसे ासंख्य प्रकार की योग्यताऐं बढ़ती हैं और कठिन ाम आसान हो जाते हैं यह पांचवीं सिद्धि है। ६- ानुष्यता की मात्रा बढ़ जाने से सब लोग उसका ावश्वास करते हैं, विश्वासी के पथ प्रदर्शन, नेतृत्व ौर कार्य-क्रम को लोग अपनाते हैं, उसके व्यक्तित्व ो जमानत पर बड़ी से बड़ी जोखम उठाने और ाग करने को लोग तैयार हो जाते हैं, बिना राज्य ारून करना छटवीं सिद्धि है। ७—बुद्धि परमार्जित ाने के कारण दूसरों की मनोदशा समझने की ोग्यता हो जाती है, निर्मल बुद्धि पर स्वच्छ दर्पण ो तरह दूसरों के मन का चित्र स्पष्ट रूप से आ ाता है। अन्य व्यक्तियों के मनोगत भावों को मझकर उनके साथ तदनुकूल व्यवहार करने से ापनी कार्य पद्धति सफल, लाभदायक एवं हितकर ाती है, यह सातवीं सिद्धि है। ८-आत्मा की पवित्रता कारण जीवन मुक्ति मिलती है. ईश्वर प्राप्ति होती सत् चित आनन्द पूर्ण स्थिति में निवास होता है, ाग और पुनर्जन्म मुट्ठी में रहते हैं यह आठवीं सिद्धि । इन अष्ट सिद्धियों को आध्यात्म पथ के साधक ापनी साधना के अनुसार न्यूनाधिक मात्रा में प्राप्त रते हैं, जिस सुख की तलाश में बहिमुर्खी व्यक्ति र प्रयत्न करते हुए मारे मारे फिरते हैं फिर भी राश रहते हैं उससे कई गुना सुख आध्यात्म ाधक अनायास ही पा जाते हैं। अष्ट सिद्धि के ाव से उनका जीवन हर घड़ी आनन्द से परिपूर्ण ाता है, दुखकी छायाभी पासमें नहीं फटकने पाती।

ाब सिद्धियाँ दूसरों के ऊपर प्रभाव करने के हैं। पहलवान शारीरिक बल को बढ़ाकर स्वा- जन्य सुख भोगता है साथ ही उस बल के ाव से दूसरों को हानि लाभ पहुंचाता है इसी ार आत्मिक पहलवानों की ऋद्धियां सिद्धियाँ हैं। शांत, निर्भय एवं आनन्दित बनाता है और ऋद्धियों के बल से दूसरों का हानि लाभ पहुँचाता है। नौ ऋद्धियां निम्न प्रकार हैं:—

आत्म बल के साथ जो भावना दूसरे पर फेंकी जाती है वह बाण के समान शक्तिशाली होती है। उनके आशीर्वाद एवं श्राप दोनों ही फलदायक होते हैं। श्राप और वरदान की प्राचीन गाथाऐं झूँठी नहीं हैं, तपस्वी पुरुष सच्चे हृदय से किसी को आशीर्वाद दें तो वह व्यक्ति लाभान्वित हो सकता है और श्राप से आपत्ति में पड़ सकता है यह प्रथम ऋद्धि है। २- तपस्वी पुरुषों की मामूली चिकित्सा से असाध्य और कष्ट साध्य रोग दूर हो सकते हैं उनकी चिकित्सा में आध्यात्मिक अमृत मिला होने के कारण ऊंचे चिकि- त्सकों की अपेक्षा भी वे अधिक लाभ पहुंचा सकते हैं यह दूसरी ऋद्धि है। ३—साधकों के आस पास का वातावरण ऐसा विचित्र एवम् प्रभावशाली होता है कि उसमें रहने से लोगों में असाधारण परिवर्तन हो जाता है। बुरे और ढीले स्वभाव के व्यक्ति साधु पुरुषों की संगति में रह कर बहुत कुछ बदल जाते हैं उनकी शारीरिक और मानसिक बिजली इतनी तेज होती है कि पास आने वाले व्यक्ति को अपने रंग में रंगे बिना अछूता नहीं छोड़ती यह तीसरी ऋद्धि है। ४—मैस्मरेजम, हिप्नोटिज्म परकाया प्रवेश आदि तरीकों से वे निकटस्थ या दूरस्थ मनुष्य को सम्मोहित करके उसके अंदर के मानसिक दोषों को हटा सकते हैं और उसके स्थान पर सद्गुणों के बीज अन्तर्मन में जमा सकते हैं यह चौथी ऋद्धि है। ५—पूर्व कर्मों के फल स्वरूप जिस प्रकार का भविष्य बन रहा है उसको पहले से ही देख सकते हैं यह पांचवीं ऋद्धि है। ६—भूतकाल की घटनाऐं और विचार धाराऐं नष्ट नहीं हो जाती वरन् ईथर तत्त्व में अङ्कित रहती है आध्यात्म साधक किसी व्यक्ति का भूतकाल अपनी दिव्य दृष्टि से देख सकता है और बिना पूछे किसी व्यक्ति का परिचय जान सकता है। यह छटवीं

तपस्या, आयु, योग्यता का कुछ अंश दूसरों को दान कर सकता है तथा किसी के पाप और कष्टों को स्वयं भुगतने के लिये आत्म बल से अपने ऊपर ले सकता है यह सातवीं ऋद्धि है। ८—आत्म शक्ति से युक्त अपनी विचार धाराओं को अदृश्य रूप से ऐसे प्रचड प्रभाव के साथ बहा सकता है कि असंख्य जनता को उन विचारों के सामने झुकना पड़े आपने देखा होगा कि वक्ती उपदेशक इधर उधर कतरनी सी जीभ चलाते फिरते हैं पर उनका कुछ भी प्रभाव नहीं होता, किन्तु सच्चे महा पुरुष थोड़ा कहते हैं तो भी उनके प्रचंड विचार बड़े बड़े कठोर हृदयों में पार हो जाते हैं उनका ऐसा तीव्र प्रभाव होता है कि उपेक्षा करना कठिन हो जाता है, आत्म शक्ति युक्त महापुरुष अपने मनोबल से जनता के विचार पलट सकते हैं युगान्तर उपस्थित कर सकते हैं यह आठवीं ऋद्धि है ९—निराशों को आशान्वित, आलसियों को उद्यमी, मूर्खों को पंडित, रोने वालों को आनन्दित पापियों को पुण्यात्मा, दरिद्रों को ऐश्वर्यवान, अभावग्रस्तों को वैभवशाली बना देना. सोते हुओं को जगा देना, नर को नारायण के रूप में परिवर्तित कर देना, अर्ध मृतकों में प्राण फूँक कर सजीव कर देना यह नववीं ऋद्धि है।

अष्ट सिद्धि नव ऋद्धि से स्वभावतः योगी लोग सम्पन्न होते हैं, जिसकी जितनी जैसी साधना है उसे उसी मात्रा में ऋद्धि सिद्धियां प्राप्त होती हैं। इनका दुरुपयोग करना बुरा है। सदुपयोग करने से आत्मिक बल वृद्धि होती है। जहां इन से बचने के लिये कहा गया है वहां उसका तात्पर्य इनका दुरुपयोग न करने से है अथवा कौतूहल पूर्ण बाजीगरी के निरर्थक खेलों में रुचि न लेने से है। योगी को स्वभावतः ऋधि सिधियां मिलती हैं यह प्राकृतिक क्रम है।

प्रार्थना से सिद्धि।

अनेक बार ऐसा देखा गया है कि सच्चे हृदय से भगवान की प्रार्थना करने से, अपना इच्छित मनोरथ पूरा कर देने की प्रभु से याचना करने से, वह कार्य पूरा हो जाता है। इस प्रार्थना से सिद्धि मिलने का एक आध्यात्मिक रहस्य है—वह यह है कि प्रार्थना करने वाले को यह विश्वास रहता है कि (१) परमात्मा ऐसा शक्तिशाली है कि वह चाहे तो आसानी से मेरी इच्छा को पूरा कर सकता है। (२) परमात्मा दयालु है। उसके स्वभाव को देखते हुए यह आशा की जा सकती है कि मेरे कार्य को पूरा कर देगा (३) मेरी माँग उचित, आवश्यक और न्याय सङ्गत है इसलिए परमात्मा की कृपा मुझे प्राप्त होगी (४) अपने अन्तःकरण का श्रेष्ठ तम भाग, श्रद्धा विश्वास, परमात्मा पर आरोपण करते हुए सच्चे हृदय से प्रार्थना कर रहा हूँ। इसलिए मेरी पुकार सुनी जायगी। इन चारों तथ्यों के मिलने से याचक की आकांक्षा प्रबल हो उठती है और उसके पूरे होने का बहुत हद तक उसे विश्वास हो जाता है, आशा की किरणों का प्रकाश उसके अन्तःकरण में भर जाता है।

ऐसी मानसिक स्थिति का होना सफलता की एक पूर्व भूमिका है। तरीका चाहे कोई भी हो पर मनुष्य यदि अपनी मानसिक स्थिति ऐसी बनाले कि मेरा मनोरथ सफल होने की पूरी आशा, पूरी संभावना है तो अधिकांश में उसके मनोरथ पूरे हो जाते हैं। क्योंकि आशा और सम्भावना मयी मनोदशा के कारण शारीरिक और मानसिक शक्तियां असाधारण रूप से जाग उठती हैं और उत्तमोत्तम उपाय सूझ पड़ते हैं, मार्ग निकलते हैं एवम् सहयोग प्राप्त होने लगते हैं जिनके कारण सफलता का मार्ग बहुत आसान हो जाता है और प्रायः वह प्राप्त भी हो जाती है।

सिद्ध जैसा अभिनय करिये।

लोग अपने कष्टों को दूसरों को सुनाकर उनकी हानुभूति प्राप्त करना चाहते हैं। देखा गया है कि ोग अपनी बीमारी, गरीबी, असफलता, दुर्भाग्य, रस्कार, हानि, विपत्ति आदि के विवरण सविस्तार सरों का सुनाने में बड़ी दिलचस्पी लेते हैं और भी कभी उसमें नमक मिर्च मिलाकर बढ़ा चढ़ा ो देते हैं। ऐसे लोग यह आशा करते हैं कि सुनने ाला उनके प्रति सहानुभूति प्रकट करेगा, दुखी ोगा, दया करेगा और दुखिया समझकर उनके लिये हायता या स्नेह के भाव रखेगा।

परन्तु यह आशा आम तौर से मिथ्या सावित ोती है। इस दुनियां में ऐसा कायदा है कि जो खी स्वस्थ, समृद्ध, सम्पन्न, सफल, सौभाग्यशाली था समर्थ होते हैं उन्हें ही दूसरों की सहानुभूति और द्भावना प्राप्त होती है। सब कोई पहले अपने ार्थ को प्रधानता देते हैं पीछे दूसरे की ओर देखते । अभागे की राम कहानी सुनकर, सुनने वाला ोचता है, इस पर दैव का कोप है, पापों का फल ोग रहा है, आलसी या अयोग्य है, ऐसे आदमी दूर रहना ही भला। यदि इसके साथ रहेंगे तो ्सी न किसी प्रकार छीजना पड़ेगा, हानि उठानी ड़ेगी ऐसे मित्रों के रखने से समाज में मेरी प्रतिष्ठा टेगी। इन सब बातों को सोचता हुआ, सुनने ाला उस वक्त शिष्टाचार की तरह चार शब्द भले कहदे या टूटी फूटी सहायता का टुकड़ा भले फेंक पर मन ही मन वह खिंचने लगता है रूखापन ौर उदासीनता प्रकट करने लगता है। इस प्रकार ह आशा मिथ्या सावित होती है जिससे प्रेरित कर कि आदमी अपने कष्टोंको दूसरों को सुनाताहै।

उचित यह है कि हम अपनी असफलताओं और नता हीनताओं को ध्यान में लावें। उन्हें दूसरों सुनाने में तो बहुत ही सावधानी रखनी चाहिए

स्पष्ट परिणाम अपनी प्रतिष्ठा को खो देना है। इस दुनियाँ में इतनी फ़ुरसत किसी को नहीं है कि आप का रोना सुनकर अपने को दुखी बनावे। हर एक को अपनी कठिनाइयाँ ही काफी हैं, आप की मुसीबतों को सुनकर अपना दिल भारी बनाने की कोई इच्छा नहीं करता।

यदि आप अपने को सफल, समृद्ध, तथा सौभाग्यशाली घोषित करगे तो उससे कई लाभ होंगे लोग समझेंगे कि आप सुयोग्य, बुद्धिमान, चतुर, अनुभवी गुणवान तथा क्रिया कुशल हैं तभी तो अपने मार्ग में सदा सफल होते हैं। ऐसे गुणवान और चतुर लोगों से अपनी मित्रता सब कोई चाहते हैं ताकि वक्त जरूरत पर उनसे कुछ सहारा मिल सके। सुयोग्य मनुष्यों से मित्रता होना भी एक योग्यता और प्रतिष्ठा की बात है यह अनुभव करके बहुत से लोग अनायास ही सौभाग्य शालियों के मित्र बन जाते हैं। इसलिये दूसरों की सहानुभूति प्राप्त करने का तरीका यह नहीं है कि अपनी असफलताओं का रोना रोया जाय वरन् यह है कि अपनी सफलताओं और समृद्धियों को बताया जाय।

अपनी असफलताओं का बार बार स्मरण करने या वर्णन करने से अपना हौसला टूटता है और मन पर अयोग्यता की छाप बैठती है। यदि एक आदमी को बार बार 'पागल' कहा जाय तो वह कुछ दिन में सचमुच ही आधा पागल बन जायगा। कारण यह है कि सुप्त मन, आदेशों को ग्रहण करके उन्हें अपने अन्दर धारण करता है और फिर जीवन क्रम को उसी ढांचे में ढालने लगता है। यदि मनमें यह बात जमाई जाय कि हम अभागे हैं, दीन दुखी हैं तो अन्तःमन उसी सूचना को स्वीकार करलेगा और जीवन क्रम का निर्माण इस प्रकार करेगा कि सचमुच ही जीवन दुर्भाग्यों से भर जायगा।

यदि आप सौभाग्यशाली बनना चाहते हैं सुनहरी भविष्य की आशा करते हैं तो स्मरण

सत्य की शरण से सिद्धि ।

(श्री. शिवप्रतापजी श्रीवास्तव, असोथर)

सत्य एक ऐसी वस्तु है जिसका आश्रय लेने से म्पूर्ण उत्तम गुणों की प्राप्ति स्वयं हो जाती है। त्य का आश्रयी सत्पुरुष सद्गुणों का समुद्र और ान का भण्डार बन जाता है । यद्यपि सत्य के ालन में आरम्भ में साधक को अनेक प्रकार की ठिनाइयों और क्लेशों का सामना करना पड़ता है, न्तु सत्य की सिद्धि हो जाने पर उसके शोक और ाह का आत्यन्तिक अभाव होजाता है। अतः सत्य पालन करने वाले पुरुष को निर्भयता से अपने त्य पर डटे रहना चाहिए। सत्य के लिये प्रमाणों ी आवश्यकता नहीं है। वह तो स्वयं स्वतः प्रमाण । अन्य सब प्रमाणों की सिद्धि सत्य पर ही अव-म्बित है। सत्य का प्रतिपक्षी सत्य को नष्ट करने लिये चाहे जितने उपाय करे, सत्य को तनिक भी ाँच नहीं आती. बल्कि वह जितना ही कसौटी पर सा जाता है, जितना ही अधिक तपाया जाता है तना ही वह उज्ज्वल रूप धारण करता रहता है। ो ताड़ना से, ताप से, मिट जाय वह सत्य ही नहीं । जो सत्य-पालन का थोड़ा सा भी महत्त्व जान या है उससे सत्य का त्याग होना कठिन है फिर न्होंने इसके तत्व का सम्यक्-परिज्ञान प्राप्त कर ाया है वे कैसे विचलित हो सकते हैं? केवल एक त्य का तत्व जान लेने पर मनुष्य सब तत्वों का ाता बन जाता है, क्योंकि सत्य परमात्मा का रूप है और परमात्मा के ज्ञान से सब का ज्ञान ो जाना प्रसिद्ध है अतः मन, वाणी और इन्द्रियों ारा सत्य की शरण लेनी चाहिये । सत्य संपूर्ण सार में व्याप्त है । अन्वेषण करने पर सर्वत्र त्य की ही प्रतीति और अनुभूति होने लगेगी। ो कुछ भी प्रतीत होता है, विचार पूर्वक परीक्षा रनेसे सब सिद्धियों का मूल एक सत्यही ठहरता है।

सात्विक सहायतायें ।

इस मास ज्ञान यज्ञ के लिये निम्न सहायतायें मिलीं । 'अखण्ड ज्योति' इनके लिये कृतज्ञ है।

१०) श्री. सत्यनारायणजी मूधड़ा हैदराबाद
७) श्री. राधे मोहनजी मिश्र वैद्य, बहराइच
५) श्री. गोपीकृष्ण बियानी अजमेर
५) श्री. सांवलदासजी मेहरोत्रा, जौनपुर
५) ठा० मोहनसिंहजी मीरगांव अर्जुनी
४) श्री. नथमल हरिकिशनजी वारंगल
३) डाक्टर शिव रतनलाल त्रिपाठी गोलागोकरननाथ
३) श्री. मदनगोपालजी गुप्त पुर्निया
३) सूबेदार रामभरोसे शर्मा युद्ध सैनिक
३) श्री. सीतलप्रसादजी अनीसाबाद
३) श्री. द्वारिकाप्रसादजी वैद्य बम्बई
३) हवलदार भीमराव सोलङ्की युद्ध सैनिक
१) श्री. शिव पूजनसिंहजी खागा
१) श्री. कन्हैयालालजी पाण्डेय जावद
१) श्री. वेंकटेशजी बारकुल
१) श्री बद्रीप्रसाद नारायनदासजी कटनी
२) श्री. केशवसिंहजी करंजा गव्हाण
१) श्री. रमेशचन्द्र गुप्ता बारा अकबरपुर
२) हैडमास्टर डी० शाह रेमुण्डा
१) श्री. सूरजमलजी सिरसा
२) श्री. श्रीकृष्ण हरलाल पागरे इन्दौर
१) श्री. वामनराव ताटके दमोह
१।) „ शिवप्रतापजी असोथर
१।।) नाथूराम श्रीकृष्ण अग्रवाल हरदा
२) श्री. गिरजाभूषणजी जबलपुर
१) श्री. नाथूराम गुप्ता फोटोग्राफर उरई
१) „ रामविहारीलालजी उरई
५) म० शिवगोपालजी शाहबाद
१) श्री. शोमानंदजी पाण्डेय रानीखेत
२) „ सर्वनलालजी कुड़ेगांव
१) डा० हरदेवलाल शर्मा, खेतड़ी
१) श्री नारायण प्रसादजी मन्डी

बलवर्धक सिद्धपाक।

(बा० गुरुदयाल वैद्य अलीगढ़)

शीतकाल के दिनों में शरीर से कारबोनिक सिड गैस (Carbonic acid gas) अधिक निक- ने के कारण पाचन शक्ति बलवती रहती है जा ाया जाता है। सम्यक तथा शीघ्र पच जाता है ष्ट रस बनता है। यही कारण है कि प्रायः लोग ाड़ों में हलुवा निशास्ता मोदक पाक आदि सेवन रते हैं। अतः हम भी इस पत्र के वाचक वृन्दों के मित्त शरद् ऋतु में सेवन करने योग्य अति लाभ द एवं उपयोगी पाक का प्रयोग (नुसखा) भेंट रते हैं। उसके गुण आयुर्वेद ग्रन्थों में इस प्रकार हैं- दृष्टि को प्रदीप्त करता है, बल को बढ़ाता दांतों के विशीर्ण होने को शमन करता है बुद्धि बढ़ाने वाला और पुष्ट करने वाला है। जो स्त्री ङ्ग से क्षीण होगये हो अथवा जिनको वीर्य रोग उनके सब विकार शान्त हो जाते हैं। मनुष्य ा रहित होजाते हैं। सारांश यह कि शारीरिक, नसिक, दुर्बलता, धातु विकार, स्वप्नदोष, प्रमेह, घ्र पतन प्रदर आदि रोगों में विशेष लाभप्रद है। ल से वृद्ध पर्य्यन्त प्रत्येक स्त्री पुरुष इस अवस्था जाड़े के मौसम में सेवन कर सकता है। प्रयोग । प्रकार है।

१. मूसली सफेद, सालिव मिश्री, तालमखाना, ठ, वहमन लाल, वहमन सफेद, तोदरी लाल, द्व मिलावा, तुदरी सफेद, कौंच के बीज, बड़ा खरू, छोटी पीपल प्रत्येक एक एक तोला। साफ धूप दिखा कूटकर वस्त्र से छान लीजिये।

२ जायफल, जावित्री, छोटी इलायची, अकर- ा, लोंग प्रत्येक नौ नौ माशे, वङ्ग भस्म, अभ्रक म, प्रवाल भस्म, लोह भस्म, हरिताल भस्म, येक तीन तीन माशे [illegible]

जायफल से लोंग तक सब दवाओं को बारीक कूट पीसकर रख लीजिये।

२. बादाम की मींग ऽI, चिलगोजे की मींग ऽI, पिस्ता ऽ-, अखरोट की मींग ऽ- चिरोंजी ऽ-, फिनूक की मींग ऽ-, काजू की मींग ऽ-,

विधि - वर्ग ३ में लिखी बादाम की मींग को प्रथम पानी में गलाने डाल दीजिये, फिर इसी वर्ग में लिखी चिलगोजे आदि अन्य मेवाओं को गाय के कच्चे दूध के साथ मिल पर एक एक करके पिठी की तरह बारीक पीस लीजिये अन्त में बादाम की मींग को छीलकर उसे भी सिल पर कच्चे दूध के साथ पीस लीजिये पुनः सब को थोड़ा सा घी डाल कर कड़ाही में भून लीजिये वर्ग नम्बर दो में लिखे ऽI≡ खोवे को भी घी डाल खूब भून लीजिये अब भुनी हुई मेवाओं की पिठी तथा भुने हुवे खोवे को एकत्र कर खूब मिला लीजिये अब ऽ२ मिश्री की जमने योग्य कड़ी चाशनी बनाइये जब चाशनी पक जावे तो उसमें ओसे लगाइये। (चाशनी को कढ़ाई में से ढोई में भरकर ऊपर से पुनः कढ़ाई में डालिये इसी क्रिया को हलवाइयों की परिभाषा में ओसा देना कहते हैं।) इसके बाद घृत में भुना खोवा मेवा पिठी आदि सब चाशनी डालकर मिला लीजिये वर्ग १ की दवा भी मिला लीजिये। वर्ग २ में कहीं भस्में मिलाकर अन्य दवा भी मिला दीजिये। एक एक कर चांदी के वर्क भी मिला लीजिये। अन्त में केशर कस्तूरी केवड़े को १ तोले दूध में घोट मिला दीजिये फिर एक परात में घी चुपड़कर कतरी जमा दीजिये कुछ ठण्डा होने या सोने के वर्क लगा दीजिये जमने तथा ठण्डा होनेपर २॥ तोले की कतरी काट लीजिये बस पाक तैयार है। मात्रा २॥ तोले प्रातः सायं गो दुग्ध के साथ।

विशेषः—जिनको अच्छी भस्में न मिल

रजि० नं० ए० ५६७

अखण्ड ज्योति, मथुरा।

आत्म-बोध

[रचियता—श्री महावीरप्रसाद विद्यार्थी, टेढ़ा—उन्नाव।]

सरिता-तरङ्गों में तुम्हारा ही विलास देख,
मग्न हो उन्हीं में लहराता चला जाता हूं।
प्राची में तुम्हारी मनोहारी मुसकान देख
मोद-मद-माता मन्द-मन्द मुसकाता हूं॥
गीत बन कण्ठ से निकलता तुम्हारा स्वर,
रागधी मधुर ध्वनि-धारा में समाता हूं।
मुख-चन्द्र व्योम-बल्लरी में मुसकाता जब,
पी के सुधा रूप की अमर-पद पाता हूं॥

कांटों में गहन बन-बीच मुसकाता हुआ,
स्वयमेव मार्ग गढ़ता मैं चला जाता हूं।
हिंस्र पशुओं के रद कुलिश-करों से तोड़
प्रति पल आगे बढ़ता मैं चला जाता हूं॥
गाते, उमड़ाते, हहराते नद-के समान
शैलों को विचूर्ण करता मैं चला जाता हूं।
नाथ! भर मन में तुम्हारी अविचल ज्योति
तम-तोम में भी हंसता मैं चला जाता हूं॥

देखता हूं जिस ओर उस ओर अभिराम
घनश्याम! रमता हुआ मैं तुम्हें पाता हूं।
देखके तुम्हारा फहराता हुआ पीत-पट
मलय-समीर की लहर बन जाता हूं॥
पल्लवों में छिप के बजाते तुम बंशी जब
नाच उठता हूं, झूम-झूम कर गाता हूं।
रङ्ग में रङ्गा मैं बन जाता हूं तुम्हारा रूप
मञ्जु मेदनी में स्वर्ग अपना बसाता हूं॥

भीषण प्रहार आते सुमनोपहार बन,
पथ के अँगार मेरे हार बन जाते हैं।
आरती उतारते दिनेश-चन्द्र मेरी नित्य
शृङ्ग व्योम-चुम्बी शीश अपना झुकाते हैं॥
मेरे लिए व्योम का वितान रहता है तना
तारे नित्य आके मञ्जु मोती बरसाते हैं।
शीतल समीर मन्द-मन्द ढारता है चौंर